इत्यादि श्रुतियों से भी सिद्ध हुआ कि शिव अद्वितीय हैं अथर्वशीर्ष के तीसरे खण्ड में सब देवता शिवजी की विभूति का वर्णन करते हुए कहते हैं—

यो रुद्रो अग्नौ यो अप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो विश्वा भुवना विवेश तस्मै रुद्राय नमोस्तु ।

(तैत्तिरीय शाखा)

अर्थात् जो रुद्र अग्नि जल औषधी और सब संसार में व्याप्त हैं, उनको नमस्कार है । इसी प्रकार रुद्राध्याय में भी 'नमः स्रोतस्याय च' इस मंत्र से सब वस्तु में शिवका सद्भाव कहा गया है । 'अथ यदिदमस्मिन्निति' इस मंत्र में भी शिवको सर्वेश कहा है। ब्रह्माण्डपुराण में कहा है कि—

ब्रह्मविष्ण्वग्निशुक्रार्कजलभूमिपुरोगमाः ।
सुराऽसुराः संप्रसूतास्ततः सर्वे महेश्वरात् ॥

ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, शुक्र, सूर्य, जल, भूमि आदि सब देवता और असुर शिव से उत्पन्न हुए हैं।

'शिवं प्रस्तुत्य सर्वाणि ह वा एतस्य नामधेयानि'

आश्वलायन के इस मंत्र में लिखा है कि शिवकी स्तुति करके नामकरण करे। स्कन्दपुराण में लिखा है कि सांसारिक लोगों में से कोई ब्रह्मा और कोई सूर्यादि मूर्तिकी उपासना करते हैं; परन्तु—

प्रतिपाद्यो महादेवः स्थितः सर्वासु मूर्तिषु ।

सब मूर्तियों में महादेव ही का प्रतिपाद्य है क्योंकि वे

सब में स्थित हैं । कूर्मपुराण में लिखा है—

गोप्ता चैव जगच्छास्ता शक्तः सर्वो महेश्वरः ।

यज्ञानां फलदो देवो महादेवनियोगतः ॥

शिव ही सर्वयज्ञफल के दाता हैं । महाभारत के वनपर्व को तीर्थयात्रा प्रकरण में—

ततोऽगच्छत्सुवर्णाक्षं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।

यत्र विष्णुः प्रसादार्थं रुद्रमाराधयत्पुरा ॥

वरांश्च सुबहूँल्लेभे दैवतैरपि दुर्लभान् ॥

अर्थात् फिर सुवर्णाक्ष तीर्थ को जावे, जहाँ विष्णु भगवान् ने शिवकी आराधना करके अनेक वर पाये थे । अनुशासनपर्व में शिवजी के द्वारा ब्रह्मा विष्णु की उत्पत्ति लिखो गयी है। जैसे—

सोऽसृजद्दक्षिणादंगाद्ब्रह्माणं लोकभावनम् ।

वामपार्श्वात्तथा विष्णुमादौ प्रभुरथासृजत् ॥

अप्रज्ञातं जगत्सर्वं यदा ह्येको महेश्वरः ॥

इस विश्वमें 'जब कुछ नहीं था तब भी शिवजी थे' इत्यादि वाक्यों तथा महाभारत के बहुतेरे स्थलों में शिवको सर्वेश्वर कहा है। हरिवंश में शिवस्तुति करके श्रीकृष्णजी के वर पाने की बात स्पष्ट ही है । अनुशासनपर्व मेंभगवान् शिवको प्रसन्न करके ही श्रीकृष्णजो ने पुत्र लाभ किया है। वाल्मीकि रामायण में एक जगह 'रौद्राय वपुषे नमः' कहते हुए उत्तर काण्डमें लिखा है—

ते तु रामस्य तच्छ्रुत्वा नमस्कृत्य वृषध्वजम् ।

और अश्वमेधयज्ञ में रामचन्द्रजी ने शिवजी की आराधना की थी—

विशेषाद्ब्राह्मणान्सर्वान् पूजयामास चेश्वरम् ।
यज्ञेन यज्ञहंतारमश्वमेधेन शंकरम् ॥

फिर युद्धकाण्ड में—

अत्र पूर्वं महादेवः प्रसादमकरोद्विभुः ॥

ऐसा कहकर शिवपूजन का विधान और उनकी सर्वोत्कृष्टता कही गयी है।

भागवत के चौथे स्कंध में दक्षयज्ञ में शिव के क्रोध-शान्ति की इच्छा करनेवाले देवताओं से ब्रह्मा ने कहा है—

नाहं न यज्ञो न च यूयमन्ये ये देहभाजो मुनयश्च तत्त्वम् ।
विदुः प्रमाणं बलवीर्ययोर्वा तस्यात्मतंत्रस्य कः विधित्सेत् ॥

अर्थात् विष्णु, तुम (ब्रह्मा), ऋषि और मुनि आदि कोई भी उन शिव की महिमा को नहीं जानते। भागवत के अष्टम स्कंध में—

न ते गिरित्राखिललोकपालविरिंचिवैकुण्ठसुरेन्द्रगम्यम् ।
ज्योतिः परं यत्र रजस्तमश्च सत्त्वं न यद्ब्रह्म निरस्तभेदम् ॥

इस वाक्य से विष्णु, ब्रह्मादि की अपेक्षा शिवकी उत्कृष्टता का प्रतिपादन किया गया है। विष्णुपुराण में लिखा है—

धिक्तेषां धिक्तेषां धिक्तेषां जन्म धिक्तेषाम्।
येषां न वसति हृदये कुमतेर्यदा विमोचको रुद्रः ॥

अर्थात् जिनके हृदय में शिवभक्ति नहीं है, उनको धिक्कार है। ऋग्वेद में—

अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया गृभ्णंति जिह्वया ससमिति।

पुरुषसूक्तमें भी 'उतामृतत्वस्येशानः' इसमें ईशपद शिव का ही बोधक है। ईशावास्य उपनिषद् में—

ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

यह कहने से भी शिव की व्यापकता का बोध होता है। इसी प्रकार बौधायनसूत्र और कात्यायनसूत्र में भी 'रुद्रो ह्येवैतत्सर्वम्' और आश्वलायन में—

'तस्मै शिवाय महते नमः सूक्ष्माक्षरात्मने'

इससे शिवकी सर्वोत्कृष्टता का प्रतिपादन किया गया है। यही बात वायुसंहिता के सातवें अध्याय में भी लिखी है।

नन्दिकेश्वर ने काशिका में इसी आशय से चौदहों सूत्रों को शिवमूलक जानकर शिव का विषय स्पष्ट किया है। रसेश्वर मुनि ने भी कहा है—

कल्पान्तरे कदाचित्तु दग्ध्वा लोकान्महेश्वरः।
सहसैवासृजद्विष्णुं ब्रह्माणं च निजेच्छया ॥

अर्थात् शिवजी ने ही सृष्टि के आदि में ब्रह्मा और विष्णु को उत्पन्न किया था ।

प्रजापतीनां प्रथमं तैजसं पुरुषं प्रभुम् ।
भुवनं भूर्भुवं देवं सर्वलोकमहेश्वरम् ॥ ६ ॥
ईशानं वरदं पार्थ दृष्टवानसि शङ्करम् ।
तं गच्छ शरणं देवं वरदं भुवनेश्वरम् ॥ १० ॥

(द्रोण० अ० २०२)

व्यासजी ने कहा—हे अर्जुन ! यह जो तुम्हें श्रीशंकरजी का दर्शन हुआ था । वे प्रजापति ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र के आदि-कारण और तेजोमय हैं । उनके शरीररूपी पुरी में समस्त विश्व शयन करता है । इसलिये अन्तर्यामीरूप से वे सब जगत् का शासन करते और राजा के समान बाहर रह कर भी सबको नियमों में रखते हैं । वे ही सब के स्वामी और वरदान देने-वाले हैं । वे ही तीनों भुवनों के ईश्वर हैं । इसलिए हमें उन्हीं की शरण लेनी चाहिए ॥ ६ ॥ १० ॥

'हे युधिष्ठिर ! वह ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है; परन्तु दृष्टिगोचर नहीं होता । ऐसे अव्यक्त, नित्य और निर्विकार शिवजी के गुणों के वर्णन करने की मुझ में शक्ति नहीं है । जो विराट् (ब्रह्मा), सूत्रात्मा (विष्णु) तथा प्राज्ञ (इन्द्र) के स्रष्टा (उपादान कारणरूप) और प्रभु (नियन्ता) हैं । ब्रह्मा से लेकर पिशाच तक जिनकी उपासना करते हैं, जो प्रकृति तथा

प्रकृति के भोक्ता पुरुष से भी परे हैं। योग जाननेवाले तत्त्ववेत्ता ऋषि मुनि जिनका चिन्तन करते हैं। जो अक्षर (अपरिणामी) तथा परब्रह्म हैं। जो रज्जु में सर्प तथा सीप में रजत के समान भासने पर भी अनिर्वचनीय अर्थात् न सत् है, न असत् है। जो प्रकृति और पुरुष से भी परे है। अर्थात् जो प्रकृति-पुरुष को दबाकर स्वयं ब्रह्माण्ड की रचना करता है। ऐसे प्रभु महादेव के गुणों के वर्णन करने में भला कौन समर्थ हो सकता है? अतः हे पुत्र! शंख-चक्रगदाधारी भगवान् के अतिरिक्त उन परमेश्वर शंकर के गुणों को कोई किस प्रकार जान सकता है?

क्योंकि नारायण ज्ञानी, विष्णु (व्यापक) और दुर्जय हैं। वे अपनी दिव्य दृष्टि से महादेवजी का दर्शन किया करते हैं। जब बद्रिकाश्रम में श्रीकृष्णजी ने भगवान् शंकर को प्रसन्न किया था, तब शिव-भक्ति के प्रभाव से ही पुरुषोत्तम कृष्ण ने समस्त संसार को व्याप्त कर लिया था।

महाभारत के अनुशासनपर्व में वैष्णव-शिरोमणि भीष्म पितामह ने कहा है—

> अशक्तोऽहं गुणान् वक्तुं महादेवस्य धीमतः।
> यो हि सर्वगतो देवो न च सर्वत्र दृश्यते ॥३॥
> ब्रह्मविष्णुसुरेशानां स्रष्टा च प्रभुरेव च।
> ब्रह्मादयः पिशाचान्ता यं हि देवमुपासते ॥ ४ ॥

प्रकृतीनां परत्वेन पुरुषस्य च यः परः ॥
चिंत्यते यो योगविद्भिर्ऋषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।
अक्षरः परमं ब्रह्म असच्च सदसच्च यः ॥ ५ ॥
प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षोभयित्वा स्वतेजसा।
ब्रह्माणमसृजत्तस्माद्देवदेवः प्रजापतिः ॥ ६ ॥
को हि शक्तो गुणान् वक्तुं देवदेवस्य धीमतः।
गर्भजन्मजरायुक्तो मर्त्यो मृत्युसमन्वितः ॥ ७ ॥
को हि शक्तो भवं ज्ञातुं मद्विधः परमेश्वरम्।
ऋते नारायणात् पुत्र शंखचक्रगदाधरात् ॥ ८ ॥
(अनु० अ० १३)

द्रोणपर्व के अ० २०२ में भी लिखा है—वे सब लोगों के कार्यों में अर्थों की वृद्धि करते और मनुष्यों का कल्याण चाहते हैं, इसी लिये "शिव" कहलाते हैं। उनके सहस्र नेत्र हैं। तभी वे इस विशाल जगत् को समदृष्टि से देखते हुए सब का पालन करते और इसीलिये महादेव कहलाते हैं ॥ १३२ ॥

वे सदा उच्च प्रदेश में रहकर प्रकाशित होते हैं। वे ही प्राणियों की उत्पत्ति स्थिति के कारण तथा सर्वदा स्थिर मूर्त्ति हैं। इसी कारण वह स्थाणु कहलाते हैं ॥ १३३ ॥

उन्हीं त्र्यम्बक के नेत्र के प्रकाश से सूर्य और चन्द्रमा में कान्ति आती और उसी से सारा जगत् प्रकाशित होता है। वह त्र्यम्बक केशरूप हैं। इस लिये शिवजी व्योमकेश कहलाते हैं १३४

भूत, भविष्यत् और वर्तमानरूप यह सब जगत् शिवजी से उत्पन्न हुआ है। इससे वे भूत भव्य और भवोद्भव हैं। इसी कारण वे भव भी कहलाते हैं॥ १३५॥

वह शिवजी सब प्राणियों के शरीर में दश प्राण रूप से विराजमान रहते हैं। वे सम यानी प्रीतिस्वरूप भी हैं। वे शिवजी पुण्यवान् तथा पापियों के भी शरीरों और प्राणों में अपानरूप से रहते हैं। जो पुरुष इन शिवजी के लिंग अथवा प्रतिमा की पूजा करता वह मनुष्य नित्य महती लक्ष्मी को प्राप्त करता है॥ १४०॥

महाभारत में भगवान् विष्णु ने एक स्थान पर कहा है—

आदित्य चन्द्रावनिलानलौ च
द्यौर्भूमि रापोऽवसवोऽथ विश्वे॥
धातार्यमा शुक्रबृहस्पती च
रुद्रः स साध्यो वरुणोऽथ गोपः॥ ७१॥
ब्रह्मा शक्रो मरुतो ब्रह्म सत्यं
वेदा यज्ञा दक्षिणा वेदवाहाः॥
सोमो यष्टा यच्च हव्यं हविश्च
रक्षा दीक्षा संयमा ये च केचित्॥ ७२॥
स्थूलं सूक्ष्मं मृदु चाप्यसूक्ष्मं
दुःखं सुखं दुःखमनन्तरं च॥

सांख्यं योगं तत्पराणां परं च
शर्वाज्जातं विद्धि यत्कीर्तितं मे ॥७७॥

आदित्य, चन्द्रमा, पवन, अग्नि, आकाश, पृथ्वी, जल, वसु, विश्वेदेव, धाता, अर्यमा, शुक्र, बृहस्पति, रुद्र, साध्य, वरुण, गोप, ब्रह्मा, इन्द्र, पवन, ब्रह्म, सत्य, वेद, यज्ञ, दक्षिणा, वेदपाठक, सोम, यजमान, हव्य, हविष, रक्षा, दीक्षा और सब प्रकार के संयम, सूक्ष्म, स्थूल, सुख, दुःख, योग और उत्तमोत्तम वस्तु, इस प्रकार जितने भी पदार्थ कहे गये हैं, सब को शंकर से उत्पन्न समझना चाहिये ॥७१॥७२॥७७॥

श्वेताश्वरोपनिषत् में कहा है।

क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः
क्षरात्मनाविशते देव एकः।
तस्याभिध्यानाद्योजनात्तत्वभावाद्
भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः ॥ १० अ० १

एको हि रुद्रो न द्वितीयाय
तस्थुर्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।
प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति संचुकोपान्त काले
संसृज्य विश्वाभुवनानि गोपाः ॥२॥
(अध्याय० ३)

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो
विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।
संबाहुभ्यां धमति संपतत्रै-
र्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः ॥३॥

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च विश्वाधिपो रुद्रो महर्षिः।
हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं स नो बुद्ध्या शुभया संयुनक्तु
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारमीशं तं ज्ञात्वा अमृता भवन्ति ॥७॥
सर्वव्यापी स भगवान् तस्मात्सर्वगतः शिवः ॥ ११॥

(अध्याय ३)

मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्।
तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ॥१०॥
सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये विश्वस्य स्रष्टारमनेकरूपम्।
विश्वस्यैकं परिवेष्टितारमीशं तं ज्ञात्वा शिवं शान्तिमत्यन्तमेति १४

(अध्याय ४)

विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः ॥१३॥

(अध्याय ५)

तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम्।
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्विदाम देवं भुवनेशमीड्यम् ॥७॥

(अध्याय ६)

जाबालोपनिषत् ॥ ११ ॥

अथ हैनं ब्रह्मचारिण ऊचुः । किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति । स होवाच याज्ञवल्क्यः । शतरुद्रियेणेत्येतान्येव ह वा अमृतस्य नामानि । एतैर्ह वा अमृतो भवतीति एवमेवैतद्याज्ञवल्क्यः ॥ ३ ॥

ब्रह्मबिन्दूपनिषत् ॥ १२ ॥

निर्विकल्पमनन्तं च हेतुदृष्टान्तवर्जितम् ।
अप्रमेयमनाद्यं च ज्ञात्वा च परमं शिवम् ॥ ९ ॥

कैवल्योपनिषत् ॥ १३ ॥

हृत्पुण्डरीकं विरजं विशुद्धं विचिन्त्य मध्ये विशदं विशोकम् ।
अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवं प्रशान्तममृतं ब्रह्मयोनिम् ॥६॥
तमादिमध्यान्तविहीनमेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम् ।
उमासहायं परमेश्वरं प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठं प्रशान्तम् ॥
ध्यात्वा मुनिर्गच्छति भूतयोनिं समस्तसाक्षिं तमसः परस्तात् ७

हंसोपनिषत् ॥ १५ ॥

तस्मिन्मनो विलीयते मनसि संकल्पविकल्पे दग्धे पुण्यपापे सदाशिवः । शक्त्यात्मा सर्वत्रावस्थितः स्वयं ज्योतिः शुद्धो बुद्धो नित्यो निरञ्जनः शान्तः प्रकाशत इति ॥ ३ ॥

गर्भोपनिषत् । १७ ॥

अहो दुःखोदधौ मग्नो न पश्यामि प्रतिक्रियाम् ।
यदि योन्याः प्रमुच्येहं तत्प्रपद्ये महेश्वरम् ॥

अमृतनादोपनिषत् ॥ २२ ॥

ओंकाररथमारुह्य विष्णुं कृत्वाथ सारथिम् ।
ब्रह्मलोकपदान्वेषी रुद्राराधनतत्परः ॥ २ ॥

अथर्वशिर उपनिषत् ॥ २३ ॥

ॐ देवाह वै स्वर्गं लोकमायँस्ते रुद्रमपृच्छन्को भवानिति । सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासं वर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति ।

हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः ।

तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत्परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः स भगवान् महेश्वरः ॥ ३ ॥

एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।

अथर्वशिखोपनिषत् ॥ २४ ॥

देवाश्चेति संधत्तां सर्वेभ्यो दुःखभयेभ्यः संतारयतीति तारणात्तारः। सर्वे देवाः संविशन्तीति विष्णुः सर्वाणि बृंहयतीति ब्रह्म। सर्वेभ्योऽन्तःस्थानेभ्यो ध्येयेभ्यः प्रदीपवत्प्रकाशयतीति प्रकाशः।

प्रकाशेभ्यः सदोमित्यन्तः शरीरे विद्युद्वद्द्योतयतीति मुहुर्मुहुरिति विद्युद्वत्प्रतीयादिशं दिशं भित्वा सर्वांल्लोकान्व्याप्नोतीति व्यापनाद्व्यापी महादेवः ॥ २ ॥

बृहज्जाबालोपनिषत् ॥ २७ ॥

शिवश्चोर्ध्वमयः शक्तिरूर्ध्वशक्तिमयः शिवः ॥
तदित्थं शिवशक्तिभ्यां नाव्याप्तमिह किंचन ॥६॥

कालाग्निरुद्रोपनिषत् ॥ ३० ॥

त्रिपुण्ड्रविधिं भस्मना करोति यो विद्वान्ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो यतिर्वा स महापातकोपपातकेभ्यः पूतो भवति स सर्वेषु स्नातो भवति। स सर्वान्वेदानधीतो भवति। स सर्वान्देवान्ज्ञो भवति स सततं सकलरुद्रमन्त्रजापी भवति। स सकलभोगान्भुङ्क्ते देहं त्यक्त्वा शिवसायुज्यमेति न स पुनरावर्तते न स पुनरावर्तत इत्याह भगवान्कालाग्निरुद्रः।

मैत्रेय्युपनिषत् ॥ ३१ ॥

देहो देवालयः प्रोक्तः स जीवः केवलः शिवः ।
त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोहंभावेन पूजयेत् ॥२॥

(अध्याय २)

मन्त्रिकोपनिषत् ॥ ३४ ॥

कालः प्राणश्च भगवान्मृत्युः शर्वो महेश्वरः ।
उग्रो भवश्च रुद्रश्च ससुरः सासुरस्तथा ॥ १२ ॥
प्रजापतिर्विराट् चैव पुरुषः सलिलमेव च ।
स्तूयते मन्त्रसंस्तुत्यैरथर्वविदितैर्विभुः ॥ १३ ॥

निरालम्बोपनिषत् ॥ ३६ ॥

ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्दमूर्तये ।
निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे ॥

किं ब्रह्म स होवाच महदहंकारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशत्वेन बृहद्रूपेणाण्डकोशेन कर्मज्ञानार्थरूपतया भासमानमद्वितीयमखिलोपाधिविनिर्मुक्तं तत्सकलशक्त्युपबृंहितमनाद्यनन्तशुद्धं शिवं शान्तं निर्गुणमित्यादिवाच्यमनिर्वाच्यं चैतन्यं ब्रह्म ॥

शुकरहस्योपनिषत् ॥ ३७ ॥

अथ महावाक्यानि चत्वारि । यथा ॐ प्रज्ञानं ब्रह्म ॥१॥

ॐ अहं ब्रह्मास्मि ॥ २ ॥ ॐ तत्त्वमसि ॥ ३ ॥ ॐ अयमात्मा ब्रह्म ॥ ४ ॥ तत्त्वमसीत्यभेदवाचकमिदं ये जपन्ति ते शिवसायुज्यमुक्तिभाजो भवन्ति ।

तेजोबिन्दूपनिषत् ॥ ३९ ॥

ॐ तेजोबिन्दुः परं ध्यानं विश्वात्महृदि संस्थितम् ।
आणवं शांभवं शान्तं स्थूलं सूक्ष्मं परं च यत् ॥१॥

नादबिन्दूपनिषत् ॥ ४० ॥

अतीन्द्रियं गुणातीतं मनो लीनं यदा भवेत् ।
अनूपमं शिवं शान्तं योगयुक्तं सदा विशेत् ॥

ध्यानबिन्दूपनिषत् ॥ ४१ ॥

रेचकेन तु विद्यात्मा ललाटस्थं त्रिलोचनम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं निष्कलं पापनाशनम् ॥ ३२ ॥
अब्जपत्रमधः पुष्पमूर्ध्वनालमधोमुखम् ।
कदलीपुष्पसंकाशं सर्ववेदमयं शिवम् ॥ ३२ ॥

योगतत्त्वोपनिषत् ॥ ४२ ॥

बिन्दुरूपं महादेवं व्योमाकारं सदाशिवम् ।
शुद्धस्फटिकसंकाशं धृतबालेन्दुमौलिनम् ॥ ९९ ॥
पञ्चवक्त्रयुतं सौम्यं दशबाहुं त्रिलोचनम् ।
सर्वायुधैर्धृताकारं सर्वाभूषणभूषितम् ॥ १०० ॥

जैसे सब सामग्री के होते हुये भी अग्नि के बिना यज्ञ शोभा नहीं देता, तैसे ही सब साधनों के होते हुए भी भस्म बिना शिव-पूजन शोभित नहीं होता।

बृहज्जाबालोपनिषद्—

ये भस्मधारणं त्यक्त्वा कर्म कुर्वन्ति मानवाः।
तेषां नास्ति विनिर्मोक्षः.........

जो मनुष्य भस्म धारण किये बिना कर्म करता है, वह मोक्ष का अधिकारी नहीं होता।

महाभारत—

आयुःकामोथवा राजन् भूतिकामोऽथवा नरः।
नित्यं वै धारयेद्भस्म मोक्षकामी च वा नरः॥

आयु चाहनेवाला, महान् ऐश्वर्य चाहनेवाला या मोक्ष की इच्छा करनेवाला मनुष्य हो तो उसे चाहिए कि सदा भस्म धारण करे।

तैत्तिरीयक श्रुति—

भूत्यै न प्रमादितव्यमिति रावणभाष्ये भूतिशब्दार्थो भस्मेति स्पष्टमुक्तम्।

भूति (भस्म) धारण करना कभी भी न भूले। रावणभाष्य में भूति शब्द का अर्थ भस्म साफ २ कहा है।

भस्म धारण के विषय की व्यवस्था–

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां ह्यग्निहोत्रसमुद्भवम् ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को अग्निहोत्र का भस्म धारण करना चाहिए ।

भृशात्यंतं सावधानो धारयेद्भस्म बुद्धिमान् ।
आदरेण समादाय भस्मपात्रे निधाय तत् ॥

बुद्धिमान् पुरुष बहुत सावधानतापूर्वक और बड़े आदर से भस्म को लेकर पात्र में रक्खे, तब उसको धारण करे ।

प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च त्रिराचम्य समाहितः ।
गृहीत्वा भस्मनो मुष्टिं सद्योजातादिभिर्गृही ॥

शान्त चित्त होकर, हाथ पैर धोके, तीन बार आचमन करके *'सद्योजात' आदि मन्त्रों से भस्म को मुट्ठी में ग्रहण करे ।

प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यात्वा चैव सदा शिवम् ।
† अग्निरित्यादिभिर्मंत्रैस्त्रिवारमभिमंत्रयेत् ॥

---

* ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमोनमः भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥ १ ॥

† ॐ अग्निरिति भस्म ॐ वायुरिति भस्म ॐ जलमिति भस्म ॐ स्थलमिति भस्म ॐ व्योमेति भस्म सर्वंह वा इदं भस्म ।

तीन प्राणायाम कर शिवजी का ध्यान करके 'अग्नि' इत्यादिक मन्त्र से तीन बार उसे अभिमंत्रित करे।

* ईशानेन पञ्चधा भस्म विकिरेन्मूर्ध्नि यत्नतः।

ईशानमन्त्र से भस्म का पाँच भाग करके यत्न के साथ मस्तक में † 'तत्पुरुषाय' इस मंत्र से, मुख पर § अघोर मंत्र से आठ भाग करके हृदय में लगावे।

वामेन गुह्यदेशे तु त्रिदशस्थानभेदतः।
अष्टधा सद्योमंत्रैः पादावेवं प्रयत्नतः॥

वाम हाथ से कमर के नीचे के स्थानों में देवस्थान के भेद से और ‡ 'सद्योजातं' इस मंत्र से आठ भाग करके यत्न से पैरों में लगावे।

---

* ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानाम्। ब्रह्माधिपतिः ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्म शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्।

† ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्

§ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥ २॥

‡ ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमोनमः। भवे भवेनातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः॥ १॥

रुद्राक्ष की महिमा

अथ भुशुंडः कालाग्निरुद्रं पप्रच्छ कथं रुद्राक्षोत्पत्तिस्त-द्धारणे किं फलमिति ।

अब रुद्राक्ष की महिमा कहते हैं—बृहज्जाबालोपनिषद् में लिखा है कि भुशुंड ने कालाग्निरुद्र से पूछा कि रुद्राक्ष कैसे उत्पन्न हुआ और इसके धारण करने से क्या फल होता है ?

स होवाच भगवान् कालाग्निरुद्रस्त्रिपुरवधार्थायाह-ममीलिताक्षोऽभवं नेत्रेभ्यो जलबिंदवो भूमौ पतितास्ते रुद्राक्षा जाताः ।

भगवान् कालाग्नि रुद्र बोले कि त्रिपुरासुर के मारने को जब मैंने नेत्र खोले, तब मेरे नेत्रों से जल की बूँदें पृथ्वी में गिरीं, उन्हीं से रुद्राक्ष उत्पन्न हुआ ।

तेषां नामोच्चारणमात्रेण दशगोदानजं फलं दर्शन-स्पर्शनाभ्यां द्विगुणं फलमत ऊर्ध्वं वक्तुं न शक्नोमि ।

उन (रुद्राक्षों) का नाम लेने से ही दस गऊ के दान करने का फल होता है और दर्शन-स्पर्शन करने से बीस गोदान करने का फल होता है । इसको (शरीर पर) धारण करने के फल को कहने के लिए मेरी सामर्थ्य नहीं ।

फलस्य दर्शने पुण्यं स्पर्शात्कोटिगुणं भवेत् ।
शतकोटिगुणं पुण्यं धारणाल्लभते नरः ॥

(देवीभागवते)

रुद्राक्ष के दर्शन करने में जो पुण्य है, उससे कोटिगुना पुण्य स्पर्श करने से होता और अरबगुना फल रुद्राक्ष के धारण करने से मनुष्य को प्राप्त होता है ।

लक्षकोटिसहस्राणि लक्षकोटिशतानि च ।
जपाच्च लभते नित्यं नात्र कार्या विचारणा ॥

(शिवरहस्ये)

लक्ष कोटि से भी सहस्रगुना और लक्षकोटि का शतगुना फल रुद्राक्ष की माला से नित्य जप करनेवाला मनुष्य पाता है, इसमें कुछ विचार (सन्देह) नहीं है ।

विभूतिधारणं कृत्वा कृत्वा रुद्राक्षधारणम् ।
यः शिवं पूजयेद्भक्त्या स मोक्षमधिगच्छति ॥

भस्म और रुद्राक्ष धारण करके जो पुरुष भक्ति से शिवजी का पूजन करता है, वह मोक्ष को प्राप्त होता है ।

रुद्राक्षालंकृता ये च ते वै भागवतोत्तमाः ।
रुद्राक्षधारणं कार्यं सर्वैः श्रेयोऽर्थिभिर्नृभिः ॥

(देवी

जो पुरुष रुद्राक्षों से भूषित हैं, वे ही भागवत भक्तों में उत्तम हैं। इस लिए कल्याण चाहनेवाले मनुष्यों को रुद्राक्ष धारण करना चाहिए।

रुद्राक्ष धारण की विधि

पंचामृतं पंचगव्यं स्नानकाले प्रयोजयेत्।
रुद्राक्षस्य प्रतिष्ठायां मंत्रः पंचाक्षरस्तथा ॥ १ ॥

जब माला गूँथकर तैयार होजाय तो पंचामृत और पंचगव्य मिलाकर माला को स्नान करावे और प्रतिष्ठा के समय 'नमः शिवाय' इस पञ्चाक्षर मन्त्र को पढ़े।

प्रक्षाल्य गंधतोयेन पंचगव्येन चोपरि।
ततः शिवाम्भसा क्षाल्य मूलमंत्रैः ततो न्यसेत् ॥ १ ॥

तदनन्तर माला को शुद्ध सुगन्धित जल से धोवे, पंचगव्य से स्नान करावे। फिर गङ्गाजल से शुद्ध स्नान कराकर उसमें मूल मन्त्र का न्यास करे।

पश्चाद्धि पूजयेत्तां हि गंधपुष्पाक्षतादिभिः।
मूलमंत्रं समुच्चार्य शुद्धभूमौ निधाय च ॥ २ ॥

फिर उसे शुद्ध भूमि में रखकर मूल मंत्र का उच्चारण करता हुआ चन्दन, फूल, चावल, धूप, दीप आदि से माला का पूजन करे।

त्र्यम्बकादिकमंत्रं च तथा तत्र प्रयोजयेत् ।
यद्वा ॐ अघोरः ॐ ह्रीं अघोरतरः ओं ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्ररूप हैं स्वाहा अनेनाभिमंत्र्य धारयेत् ।

अथवा त्र्यम्बकादिक मन्त्रों से प्रतिष्ठा करे या 'ॐ अघोरः ओं ह्रीं ओं अघोरतरः ओं ह्रौं ह्रां नमस्ते रुद्ररूप हैं स्वाहा' इस मन्त्र से प्रतिष्ठा करके माला को धारण करे ।

माला में गुँथे हुए दानों का फल—

त्रिंशदक्षैः कृता माला धनदा जपकर्मणि ।
सप्तविंशतिसंख्यातैः कृता मुक्तिप्रदा भवेत् ॥
अक्षैस्तु पंचदशभिरभिचारफलप्रदा ॥ २ ॥

तीस रुद्राक्ष की बनाई हुई माला जपकर्म में धन को देनेवाली, सत्ताईस रुद्राक्ष की माला शरीर को सुख देनेवाली, पच्चीस रुद्राक्ष की माला मुक्ति की देनेवाली तथा पन्द्रह रुद्राक्ष की माला अभिचार फल की देनेवाली है ।

रुद्राक्षाणां पंचमुखस्तथैवैकमुखः स्मृतः ।
ये धारयंत्येकमुखं रुद्राक्षं नित्यमेव हि ॥ १ ॥

जीवन्मुक्तास्तु विज्ञेया नरास्ते नात्र संशयः ।
एकवक्त्रः शिवः साक्षात् ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥ २

(केदारखण्डे)

(सोलह प्रकार के) रुद्राक्षों में पञ्चमुखी और एकमुखी रुद्राक्ष जो (मनुष्य) धारण करते हैं, वे मनुष्य जीवन्मुक्त और एकमुखी (रुद्राक्ष) धारण करनेवाले साक्षात् शिवरूप हैं। क्योंकि वह माला ब्रह्महत्या को भी दूर कर देती है।

अष्टोत्तरशतेनापि माला सर्वार्थसाधिका ।
रुद्राक्षमूलं ब्रह्मा तु तन्नालं विष्णुरुच्यते ॥

एक सौ आठ दानों की माला सब मनोरथ पूर्ण करती है। रुद्राक्ष का मूल ब्रह्मा और नाल साक्षात् विष्णु भगवान् हैं।

लिङ्गपूजन-मीमांसा

बेरमात्रे तु सर्वत्र पूज्यन्ते देवतागणाः ।
लिङ्गे चैव हि सर्वत्र कथं संपूज्यते शिवः ॥

सब जगह साकाररूप में ही देवगणों का पूजन किया जाता है, फिर लिङ्ग में शिव का पूजन कैसे करते हैं ? ऐसे शौनकादिकों के पूछने पर सूतजी कहते हैं, शिवजी दो प्रकार के हैं:—

(१) ‡निष्कल और (२) सकल। निष्कल होने से निराकार लिङ्ग का पूजन हुआ और सकल होने से साकार मूर्ति का पूजन माना जाता है। इनके सिवाय और सब देवता साकार ही हैं ॥ १ ॥

सब देवता सकल हैं, इससे साकार मूर्ति का पूजन किया जाता है, किन्तु शिवजी साकार निराकार दोनों हैं, इस लिए दोनों प्रकार से पूजन करते हैं ॥ २ ॥

'वेर' प्रतिमा का नाम है। इस विषय में शिवजी ने स्वयं कहा है कि लिङ्ग और वेर दोनों समान हैं तो भी पूजनेवालों को लिङ्ग का ही पूजन करना चाहिए। इस वास्ते मुक्ति के चाहनेवालों को लिङ्ग का पूजन करना श्रेयस्कर है। अतएव लिङ्ग का ही पूजन करना चाहिए ॥ ३ ॥

---

‡ शिवो हि द्विविधः प्रोक्तो निष्कलः सकलस्तथा।
निष्कलत्वान्निराकारं लिङ्गं तस्य सुसंगतम् ॥ १ ॥
सकलत्वात्तथा वेरं साकारं तस्य संगतम्।
अब्रह्मत्वाच्च जीवत्वात्तथान्ये देवतागणाः ॥ २ ॥
सर्वे सकलमात्रत्वादर्च्यंते वेरमात्रके।
शिवस्योभयरूपत्वाल्लिङ्गे वेरे च पूज्यते ॥ ३ ॥

श्रीमत्सूतसंहिता—

ऐश्वरं परमं तत्त्वमादिमध्यान्तवर्जितम् ।
आधारं सर्वलोकानामनाधारमविक्रियम् ॥ १ ॥

श्रीमद्विद्यारण्यकृततात्पर्य दीपिका—

इह हि भगवान् वादरायणः लोकानुग्रहैकरसिकतया परशिवस्वरूपाविष्करणप्रधानां संहितामारभमाणः महतः पुरुषार्थस्य प्रत्यूहप्राचुर्यात्तन्निवृत्तये शिष्टाचारानुमितश्रुतिबोधितकर्त्तव्यताकं परशिवस्य प्रणिधानप्रणवलक्षणं मंगलं स्वकृतं शिष्यशिक्षार्थं ग्रंथादावुपनिबध्नाति—ऐश्वरमित्यादिश्लोकद्वयेन । द्विविधं हि पारमेश्वरं रूपं । निष्कलं सकलं चेति (निष्कलस्सकलश्शंभुर्लिंगमूर्तिर्विराजते) इति सिद्धान्ते । तत्र निष्कलं शुद्धं । सकलं शंभुलिङ्गमूर्तिरूपं स्वप्रकाशाखण्डसच्चिदानन्दैकरसमद्वितीयं स्वप्रतिपत्तिफलं तत्प्रणिधानं प्रथमार्धेन । निष्कलस्वरूपं बोधानन्दमयं प्रणिधेयत्वेनोक्तं शैवागमे—परैक्यप्रापकं ज्ञानं वच्मि सम्यग्घिताय वः । चिदानन्दमयं पूर्णं प्रत्यक् ब्रह्मात्मना स्थितम् परे व्योम्नि शिखान्तस्थः निष्कलः परमः शिवः । चिदानन्दघनस्सूक्ष्मस्सर्वभूतानुकंपया इति । तथा सोमशंभुनापि—जगन्मूलमकर्तारं बोधानन्दमयं विभुं । निष्कलं स्वप्रकाशं च संचिन्त्य परमं शिवमिति । वृत्तेरसाक्षितया वृत्तिप्रागभावस्य च स्थितः । बुभुत्सायास्तथाज्ञोस्मीत्यापातज्ञानवस्तुनः । असत्यालंबनत्वेन सत्यः सर्वजडस्य तु ।

साधकत्वेन चिद्रूपः सदा प्रेमास्पदत्वतः। आनन्दरूपस्सर्वार्थसाध-कत्वेन हेतुना । सर्वसंबंधवत्त्वेन संपूर्णः शिवसंज्ञितः। जीवेश-त्वादिरहितः केवलः स्वप्रभश्शिवः। इति शैवपुराणेषु कूटस्थः प्रविवेचित इति च । मोहशूलोत्तरेपि—'शिवं पूर्ववदावाह्य बोधानन्दघनामृतमिति' ।स्वाधीनमायोपाधिस्वीकारेण जगन्निर्माण-नियमनपरिपालनादिकर्तृ तत्त्वमैश्वरं तदुक्तं मृगेन्द्रसंहितायां शिवं प्रस्तुत्य—'जगज्जन्मस्थितिध्वंसतिरोभावविमुक्तये । कृत्यं सकारक-फलं ज्ञेयमस्त्येतदेव हीति। तस्य द्विविधं रूपं। परमपरं च। लीलास्वीकृत पथोदीरितोपाधिविशिष्टमपरं । निरस्तसमस्तोपा-धिकं स्वप्रतिष्ठमखण्डसच्चिदानन्दैकरसमद्वितीयं परं । तत्र यत्परं तत्त्वं परमात्मभूतं त्रैकालिकबाधशून्यं । मिथ्याभूतपरिकल्पित-स्वरूपमायातत्कार्यसंस्पर्शविरहात् । ननु मायाकार्येण कालेनाव-च्छेदादेव कथं न स्पर्श इति । तत्राह । आदिमध्यान्तवर्जितमिति । स्वप्रागभावावच्छिन्नो भूतकाल आदिः स्वावच्छिन्नो वर्तमान-कालो मध्यः । स्वप्रध्वंसावच्छिन्नो भविष्यत्कालोऽन्तः । एतत्त्रितयवर्जितं । कलातत्त्वसद्भावे हि कालतत्त्वं उक्तं हि—'पुंसो जगत्कर्तृतार्थं मायातस्तत्त्वपंचकं भवति । कालो नियतिश्च तथा भूतयदिच्छा स्वभावाश्च, इति निष्कलदशायां कला सहभावी काल एव नास्ति । कुतो निष्कलपरशिवस्य परिच्छेदशंकेत्यभिप्रायः । इत्थं निष्कलप्रणिधानंकृतं सकलमपि द्विविधं समस्तजगदात्मकं

समस्तजगन्नियन्तृलीलावताररूपं चेति। अत एव हि रुद्राध्याये जगदात्मना जगन्नियंतृलीलावताररूपेण च नमस्कारः कृतः। तत्र जगदात्मना प्रणाममाह द्वितीयार्धेन। आधारमिति। यथैव हि सत्त्वमायोपाधिवशाज्जगन्नियन्तृत्वं निमित्तकारणं पारमेश्वरं तत्त्वं तमोपाधिवशाज्जगदात्मकतया तदुपादानत्वेन, एवं रजोगुणोपाधिवशाज्जगदाधारोपि। उक्तं हि जगन्नियन्तृत्वजगदात्मकत्वे परमेश्वरस्य। शिवो दाता शिवो भोक्ता शिवस्सर्वमिदं जगदिति, 'स्थितिसंयमकर्ता च जगतोऽस्य जगत्स चेति'। श्रूयते—'सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेयेति'। अत्र हि सोऽकामयतेति निमित्तत्वं। बहुस्यामित्युपादानत्वं तथा पाराशर्यं सूत्रमपि—'प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्तानुपरोधादिति। यथैव सर्वलोकानामयमाधार एवमस्यापि कश्चिदन्य आधारःस्यादितीमां शंकां निरस्यति। अनाधारमिति स्वातिरिक्ताधाररहितः। स भगवः कस्मिन्प्रतिष्ठितः ? स्वमहिम्नीति' स्वमहिम प्रतिष्ठितत्वश्रुतेः। ननु जगदाधारश्चेदाधेयजगदात्मना धर्मेण उपायापायवता विकारित्वं तस्य स्यात् उपयन्ननपयन् धर्मो विकरोति हि धर्मिणमिति न्यायात्तत्राह अविक्रियमिति। कल्पितत्वेन जगतो न स्वाश्रयविकारहेतुता। न हि मरुमरीचिका जलैर्मरुभूमिरार्द्रीक्रियत इत्यर्थः॥ १॥

अनन्तानन्दबोधांबुनिधिमद्भुतविक्रमम्।
अंबिकापतिमीशानमनिशं प्रणमाम्यहम्॥ २॥

इदानीं जगन्नियन्तृलीलावताररूपेण प्रणिधानमाह—अनन्तेति द्वितीयश्लोकेन । अवतारो हि ध्यानपूजार्थं शिवेन स्वीक्रियते तदुक्तं सुप्रभेदे—यतीनां मन्त्रिणाञ्चैव ज्ञानिनां योगिनां तथा । ध्यानपूजा-निमित्तं हि तनुं गृह्णाति मायया, इति अद्भुताः । विक्रमास्त्रिपुरदहना-दयो यस्य तं । अंबिकायाः पतिः अम्बिकापतिं विजयपरिणयनादयः परमेश्वरस्य लीला दर्शिताः । तर्हि प्राकृतपुरुषवदेव रागद्वेषादि-दोषसंभवात्संसार्येवासौ इति । नेत्याह ईशानमिति । संसारिणो हि रागद्वेषादिवशीकृत त्वात्पुरुषान्तरपरतन्त्रत्वाच्च स्वयम-नीशाना ईशवन्तश्च । शिवस्तु लीलयैव विजयपरिणयनादिव्या-पाराना चरन्नपि रागद्वेषादिविरही सर्वजगदीशिता च न पुरुषान्तर-परतंत्र इति न लौकिकसम इत्यर्थः । ननु लोकवदेव शिवस्यापि सर्वव्यवहाराश्श्रूयन्ते । अतएवषां लोलारूपता कुत इत्यत आह—अनन्तेति । अन्तः परिच्छदः तद्रहितयोरानन्दबोधयोरंबु-धिस्समुद्रः अतः तत्कृतः परिच्छदविरहात्परमेश्वरयोरानन्दज्ञान-योर्न लौकिकानन्दज्ञानवदुत्पत्तिविनाशवत्वं वस्तुकृतपरिच्छदवि-रहाच्च तयोरखण्डैकरसत्वमितीशानः । अतिशायिनो वस्त्वन्त-रस्याभावेन तस्य निरतिशयत्वं चेति कुतो लौकिकसाधारण्यशंका-वकाश इत्यर्थः । यद्यप्यंबुनिधिरन्तवान्सातिशयश्च तथापि लौकिनां समुद्रेऽन्तवत्वसातिशयत्वविरहाभिमानात्तदभिमतदृष्टान्तेनैव परमेश्व-रस्यात्यंतिकमानन्त्यंनिरतिशयत्वं च दर्शयितुं अंबुनिधित्वेन रूपणं

कृतमिति । ननु लौकिका अपि सर्वात्मकादीश्वरादभिन्ना एवेति कथं तदीयौ ज्ञानानन्दौ न तत्सदृशाविति । सत्यं तत्सदृशौ । अज्ञानेनावृतत्वात्तु तत्सादृश्यं न ते जानन्ति । उक्तं हि । 'अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः इति । अतस्तिरोहितज्ञानत्वाल्लौकिकानां व्यापारा दुःखमया एव न लीलाः । अनावरणपरमानन्दज्ञानत्वेन तु परमेश्वरस्य विजयपरिणयनादिव्यापारा लीला एवेत्यर्थः । नमामीति निष्कलपरशिवस्य तद्रूपतयाऽवस्थानमेव प्रणामः । सकलस्य तु ध्यानस्तुतिपूजात्मकः । तदुक्तं सुप्रभेदे—ध्यानपूजाविहीनं यन्निष्कलं तद्विधायकम् । तत्तस्मात्सकलं शंभुं निष्कलं संप्रपूजयेत्' इति ॥ २ ॥

देवदेवस्त्वमेयात्मा अजेयो विष्णुरव्ययः ।
सर्वरूपभवं ज्ञात्वा लिंगेऽर्चयति प्रभुः ॥

महाभारत के द्रोणपर्व में अश्वत्थामा से व्यासजी ने कहा है कि प्रकाशरूप, प्रमाण नहीं करने और नहीं जीतने योग्य, जगत् को विस्तारित करनेवाले, अविनाशी और सर्वस्वरूप शिव ही हैं ऐसा जानकर लिङ्ग में ही प्रभु का पूजन करे ।

द्रोणपर्व में श्रीकृष्णचन्द्रजी ने अर्जुन की बड़ाई करते हुए अश्वत्थामा के प्रति कहा है—

जन्मकर्मतपोयोगास्तयोस्तव च पुष्कलाः ।
आभ्यां लिंगेऽर्चितो देवस्त्वयाऽर्चायां युगे युगे ॥२॥

जन्म, कर्म, तप, योग और उनकी स्तुति भी बहुत है। इन दोनों ने युग-युग में लिङ्गरूपी शिवजी का पूजन किया है, इस लिए प्रतिमास्वरूप शिव का पूजन श्रेष्ठ है।

प्रतिमायां प्रयत्नेन कृतया सांगपूजया।
यत्फलं तत्फलं प्राप्यं व्यंगया लिंगपूजया ॥ १ ॥

(शिवरहस्ये)

शिवरहस्य में कहा है—सावधानी के साथ प्रतिमा में साङ्ग पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, वही फल अङ्गहीन भी लिङ्ग-पूजा से होता है।

योऽर्चायामर्चयेद्भक्त्या पूर्णं वर्षशतं नरः।
लिङ्गमेकदिनं पूज्यं सममेतन्न संशयः ॥ १ ॥
शंभोर्लिङ्गं समभ्यर्च्य पुरुषार्थचतुष्टयम्।
प्राप्नोत्यत्र पुमान्सद्यो नात्र कार्या विचारणा ॥२॥

स्कन्दपुराण में कहा है कि सौ वर्ष तक मूर्ति का पूजन करे और एक दिन लिङ्ग का पूजा करे, वह सौ वर्ष के पूजन के समान है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १ ॥ शिवलिङ्ग का पूजन करने से अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, इन चारों पदार्थों को मनुष्य प्राप्त कर लेता है। इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ २ ॥

अयमेव परो धर्मस्त्विदमेव परं तपः ।
इदमेव परं ज्ञानं शिवलिङ्गं यदर्च्यते ॥ १ ॥

(वायुपुराणे)

वायुपुराण में कहा है कि यही एक बड़ा धर्म है, यही एक बड़ा तप है और यही परमज्ञान है कि शिवलिङ्ग का पूजन करे ॥१॥

लिंगे मांपूजयेद्धरं लिङ्गरूपधरो ह्यहम् ॥ (सौरपुराणे)

सौरपुराण में भगवान् विष्णु के प्रति शिवजी का वचन है—हे हरे ! लिङ्ग में मेरा अर्चन करो क्योंकि मैं लिङ्गरूप हूँ ।

जन्मांतरसहस्रेषु यज्ञदानादिभिर्द्विजाः ।
नराणां क्षीणपापानां श्रद्धा लिङ्गार्चने भवेत् ॥१॥

(लिङ्गे)

वसिष्ठ की वचन है—हे ब्राह्मणो ! हजारों जन्मों के तप, दान और यज्ञ करनें से जिन पुरुषों के पाप नष्ट हो जाते हैं, लिङ्ग-पूजन में उनकी श्रद्धा होती है ॥ १ ॥

कलौ लिङ्गार्चनं श्रेष्ठं यथा लोके प्रदृश्यते ।
तथा नास्तीति नास्त्यन्यत् शास्त्राणामेव निश्चयः ॥

(शिवरहस्ये)

कलियुग में लिङ्ग का पूजन श्रेष्ठ है । जैसा लोक में देखते हैं कि शिवजी के मूत्र त्याग करने की इन्द्रिय का पूजन है, सो बात नहीं है । यह सब शास्त्रों का निश्चय है ।

लिङ्गार्चनविधिज्ञो यः लिङ्गार्चनरतः सदा ।
त्र्यक्ष एव स विज्ञेयः साक्षाद्द्व्यक्षोपि मानवः ॥

(काशीखण्डे)

जो पुरुष लिङ्गपूजा की विधि को जानता और लिङ्ग-पूजा करने में सदा प्रीति रखता है, वह प्रत्यक्ष दो नेत्रवाला मनुष्य होता हुआ भी त्रिनेत्र शिव है ।

रसलिङ्गं ब्राह्मणानां सर्वाभीष्टप्रदं भवेत् ।
† बाणलिङ्गं क्षत्रियाणां महाराज्यप्रदं भवेत् ॥ १ ॥
स्वर्णलिङ्गं तु वैश्यानां महाधनपतित्वदम् ।
शिलालिङ्गन्तु शूद्राणां महाशुद्धिकरं शुभम् ॥ २ ॥

(विश्वेश्वरसंहिता)

पारे का लिङ्ग ब्राह्मणों के सब मनोरथ को पूरा करता और बाणलिङ्ग (नर्मदेश्वर) क्षत्रियों को बड़े राज को देनेवाला है ॥ १ ॥ सोने का लिङ्ग वैश्यों को महा धनपति करता है और शिलालिङ्ग शूद्रों की परमशुद्धि करनेवाला है ॥ २ ॥

कृते मणिमयं लिङ्गं त्रेतायां हेमसंभवम् ।
द्वापरे पारदं श्रेष्ठं पार्थिवं तु कलौ युगे ॥ १ ॥

(कैङ्गे)

---

† नर्मदाजलमध्यस्थं बाणलिङ्गमिति स्थितम् ॥
नर्मदाजल में रहनेवाले लिङ्ग को बाणलिङ्ग कहते हैं ।

सत्ययुग में मणि का लिङ्ग, त्रेता में सोने का लिङ्ग, द्वापर में पारे का लिङ्ग और कलियुग में मिट्टी का लिङ्ग बनाकर पूजन करना चाहिए ॥ १ ॥

रौद्रं लिङ्गं महाविष्णुर्भक्त्या शुद्धं च पार्थिवम् ।
चारु चित्रं समभ्यर्च्य लब्धवान्परमं पदम् ॥

रुद्र के मनोहर और शुद्ध पार्थिव लिङ्ग का पूजन करने से विष्णु भगवान् परमपद को प्राप्त हुए थे ।

एककालं द्विकालं वा त्रिकालमथ वा नरः ।
लिङ्गं महीजं सम्पूज्य शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥

दिन में एक काल, दो काल अथवा त्रिकाल में पार्थिव-लिङ्ग का नियम से पूजन करनेवाले मनुष्य शिव-सायुज्य मुक्ति को पाते हैं ।

यो न पूजयते लिङ्गं ब्रह्मादीनां प्रकाशकम् ।
शास्त्रवित्सर्ववेत्तापि चतुर्वेदः पशुस्तु सः ॥

(पाद्मे)

पद्मपुराण में लिखा है कि जो मनुष्य ब्रह्मादिकों के प्रकाश करनेवाले शिवलिङ्ग का पूजन नहीं करता, वह शास्त्र और अङ्ग सहित चारों वेदों का जाननेवाला भी हो तो पशु है ।

अहरहः शिवलिङ्गमनभ्यर्च्य नाश्नीयात् फलमन्नमन्यद्वा यद्यश्नीयाद्रेतोभक्षी भवेत् ।

बृहज्जाबालोपनिषद्—

बृहज्जाबाल उपनिषद् में कहा है कि प्रति दिन शिवलिङ्ग का पूजन न करके जो मनुष्य भोजन करता है तो वह वीर्य खाने का अपराधी होता है ।

यस्येन्द्रियाणि पूजार्थं भवन्ति शुभदेहिनः ।
कदाचिदपि वा विप्र सफलं तस्य जीवितम् ॥१॥

जिस उत्तम देहधारी की इन्द्रियाँ पूजा के लिए प्रवृत्त होती हैं, उसी का जीना सफल है ॥ १ ॥

स्त्रियों को लिङ्गपूजा का अधिकार—

स्त्रीणां सुपार्थिवं लिङ्गं सभर्तृणां विशेषतः ।
विधवांनां निवृत्तानां रसलिङ्गं विशिष्यते ॥
विधवानां प्रवृत्तानां स्फाटिकं परिकीर्त्तितम् ॥१॥

स्त्रियों को पार्थिवलिङ्ग का पूजन करना चाहिए और सुहागिनों को तो अवश्य ही पार्थिव-पूजन करना चाहिए जो विधवा स्त्री संसार से (सांसारिक भोगों से) विरक्त हों, उनको पारद लिङ्ग पूजना श्रेयस्कर है और जो संसार में प्रवृत्त (आसक्त) हों, उन विधवा स्त्रियों को बिल्लौर के लिङ्ग का पूजन करना चाहिए ॥१॥

पुरा मृन्मयं लिङ्गमर्च्य लक्ष्मी प्रयत्नतः ।
जाता सौभाग्यसंपन्ना महादेवप्रसादतः ॥

(सनत्कुमारसंहिता)

पहले यत्नपूर्वक (जगन्माता विष्णुवल्लभा) लक्ष्मीजी मृत्तिका की लिङ्ग का पूजन करके महादेवजी की कृपा से सुहाग से पूरी हुई थीं।

प्रसवो जायते यस्यास्तया तु शैवपूजनम् ।
कर्तव्यं मानसं नित्यं दशाहांतं प्रयत्नतः ॥
दशाहे समतीते तु कृत्वा स्नानं यथाविधि ॥ १ ॥
शिवलिङ्गार्चनं कार्यं द्विजस्त्रीभिर्द्विजैरिव ।
होमोऽयं पुरुषाणां तु स्त्रीणां तु न कदाचन ॥ २ ॥

प्रसवकाल में स्त्रियों को दस दिनों तक मानस शिव-पूजन करना चाहिए और दस दिन के अशौच (वृद्धिसूतक) निवृत्त होने पर विधिपूर्वक स्नान करके द्विजाति स्त्रियों को द्विजातियों की तरह ही लिङ्गार्चन करना चाहिए, परन्तु होम केवल पुरुषों को ही विहित है, स्त्रियों को नहीं ॥ १ ॥ २ ॥

अभिषेक के विषय में विवेचना—

केवलेनोदकेनैव स्नापनं मे भवेत्सदा ।
गंधोदकं शतगुणं पंचगव्यं ततोधिकम् ॥१॥

अस्माच्छतगुणं क्षीरं सहस्रं कापिलं भवेत् ।
ततः शतगुणं प्रोक्तं सर्पिषा स्नानमेव च ॥२॥
कापिलानामभावेन सर्पिषा स्नापयेच्च माम् ।
क्षमामि देवि तस्याहमपराधान्बहूनपि ॥ ३ ॥

(सनत्कुमारसंहितायाम्)

केवल जल से मेरा नित्य स्नान होता है, जल से स्नान कराने की अपेक्षा सौगुना अधिक फल सुगन्धित जल के अभिषेक से होता है। उससे भी अधिक दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र, इन (पञ्चगव्य) पाँचों के स्नान से होता है। पंचगव्य से भी सौगुना अधिक फल दूध के अभिषेक से होता है। साधारण दूध से सौगुना अधिक फल कपिला (पीली) गौ के दूध से होता है। हे देवि ! कपिला के दूध से अथवा घी से जो पुरुष मुझको स्नान कराते हैं, उनके बहुत से अपराधों को मैं क्षमा कर देता हूँ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

वर्जयेच्छिवपूजायां शंखतोयं विशेषतः ।

शिवपूजा में शंख का जल विशेष करके त्याज्य है ।

शिव-पूजन के लिए ग्राह्य जल—

नद्याः समुद्रगामिन्याः नदाद्वा स्वयमाहृतम् ।
वस्त्रपूतं च शीतं च विशिष्टं शिवपूजने ॥१॥(स्कान्दे)

वस्त्रपूतैर्जलैर्लिङ्गं स्नापयित्वा ममामराः ।
लक्षाश्वमेधजं नित्यं पुण्यमाप्नोति मानवः ॥ २ ॥

(काशीखण्डे)

समुद्र में पहुँचनेवाली नदी से अथवा साधारण नदी से लाया जल और कपड़े से छना हुआ शीतल जल शिव-पूजन में ग्राह्य माना गया है। काशीखण्ड में कहा है कि वस्त्र से छने हुए जल से शिवलिङ्ग को स्नान करानेवाले मनुष्य दस लाख अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

निषिद्ध जल—

कलुषं क्रिमिसंमिश्रमौषरं पल्वलोदकम् ।
अशुद्धभूतलस्थं च शिलागतजलं च यत् ॥ १ ॥
सदा छायायुतं त्याज्यमंत्यजातिनिषेवितम् ।
इत्यादिदोषसंयुक्तं वर्ज्यन्तोयं शिवार्चने ॥ २ ॥

जिसमें कीड़े पड़ गये हों, जो ऊषर भूमि में भरा हुआ हो, छोटे तालाब का जल, अशुद्ध पृथ्वी का पानी, शिला के गढ्ढे में जो इकट्ठा हुआ हो वह पानी, जिसके ऊपर सदा छाया रहे, जिसमें नीच जाति पानी ग्रहण करें, इन दोषों से युक्त जल को त्याग देना चाहिए ॥ १ ॥ २ ॥

शूद्रानीतं स्त्रिया नीतं वामहस्ताहृतं तथा ।
अन्यपूजावशिष्टं च जलं त्याज्यं शिवार्चने ॥ १ ॥

शूद्र का लाया, स्त्री का लाया, बायें हाथ से लाया और दूसरे किसी पुरुष का पूजन से बचा हुआ शेष जल शिव-पूजा में त्याग करने योग्य है ॥ १ ॥

अक्षत—

अर्चयिष्यति यो नित्यमखंडैः शालितंदुलैः ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥१॥
यस्तु नित्यं तिलैः कृष्णैः श्वेतैर्वा पूजयिष्यति ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥२॥
प्रियंगुतंदुलैर्नित्यं यो मामभ्यर्चयिष्यति ।
तमूर्ध्वं नेतुमिच्छामि प्रतिज्ञेयं मम प्रिये ॥३॥

भगवान् शिवजी ने अपने मुखारविन्द से कहा है कि जो पुरुष साबूत चावलों से नित्य मेरा पूजन करते हैं, उनको मैं शिव-लोक में ले जाता हूँ । यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥ १ ॥ जो पुरुष नित्य काले या श्वेत तिलों से मेरा पूजन करते हैं, उनको मैं अपने लोकों में ले जाता हूँ, यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥ २ ॥ और हे प्यारी ! कँगनी के चावलों से जो मेरी पूजा करता है, उसको शिवलोक में ले जाने की मेरी प्रतिज्ञा है ॥३॥

चन्दन —

लिङ्गस्य लेपनं कुर्याद्दिव्यगंधैर्मनोरमैः ।
वर्षकोटिशतं दिव्यं शिवलोके महीयते ॥ १ ॥
सुगंधलेपनात्पुण्यं द्विगुणं चन्दनस्य च ।
चन्दनाच्चागुरोर्ज्ञेयं पुण्यमष्टगुणाधिकम् ॥ २ ॥
कृष्णागुरौ विशेषेण द्विगुणं फलमिष्यते ।
तस्माच्छतगुणं पुण्यं कुंकुमस्य विधीयते ॥ ३ ॥

(सौरपुराणे)

चंदनागुरुकर्पूरनाभिरोचनकुंकुमैः ।
लिङ्गमेतैः समालिप्य गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

(स्कन्दपुराणे)

जो मनुष्य शिवजी को दिव्य, सुगंधित और मन को प्रसन्न करनेवाले चन्दन का लेप करता है, वह दिव्य सौ करोड़ वर्ष तक शिव लोक में वास करता है ॥ १ ॥ सौरपुराण में लिखा है कि सुगंधि के लेप से जो पुण्य होता है, उससे दुगुना चन्दन से और चन्दन से भी अठगुना अधिक फल अगर से होता है ॥ २ ॥ साधारण अगर से द्विगुण पुण्य काले अगर से होता और काले अगर से सौ गुना केसर के चन्दन के लेप से होता है ॥ ३ ॥ स्कन्दपुराण में कहा है कि चन्दन, अगर, कस्तूरी और केसर

इनसे शिवलिङ्ग का लेप करनेवाला पुरुष शिवजी के गण का स्वामी होता है ॥ ४ ॥

बिल्वपत्र और पुष्प--

शिवपूजनं सति संभवे बिल्वपत्ररहितं न कार्यम् ।

बिल्वपत्र के मिलने की जगहों में बिल्वपत्र के बिना शिव-पूजन नहीं करना चाहिए ।

नित्यमार्द्रैरनाविद्धैर्बिल्वपत्रैः सदाशिवम् ।
पूजयस्व महादेवं तस्मान्माप्रमदो भव ॥ १ ॥

(ब्रह्माण्डपुराणे)

ब्रह्माण्डपुराण में कहा है कि नित्य गीले और बिना छेद-वाले बिल्वपत्रों से सदाशिव महादेवजी का पूजन सावधानी के साथ करना चाहिए ॥ १ ॥

एकं बिल्वदलं रम्यं मद्भक्तेनार्पितं मयि ।
अनंताघहरं नूनं सत्यमेवोच्यते मया ॥ २ ॥

(सौरपुराणे)

मेरे भक्त का मेरे पर चढ़ाया हुआ एक ही बिल्वपत्र अनन्त पापों का नाश करता है, मैं यह निश्चय और सत्य कहता हूँ ॥२॥

पंचाक्षरेण मन्त्रेण बिल्वपत्रैः शिवार्चनम् ।
करोति श्रद्धया यस्तु स गच्छेदैश्वरं पदम् ॥(ब्रह्माण्डे)

जो पुरुष पंचाक्षर मंत्र पढ़कर बिल्वपत्रों से शिव-पूजन करता है, वह (भक्त) शिव पद को पाता है।

बिल्वपत्र तोड़ने में निषिद्ध दिन—

अमारिक्तासु संक्रान्तावष्टम्यामिंदुवासरे ।
बिल्वपत्रं न च च्छिंद्याच्छिंद्याच्चेन्नरकं व्रजेत् ॥ १ ॥

(लैङ्गे)

अमावस्या, रिक्ता (चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी) संक्रांति, अष्टमी और सोमवार को बिल्वपत्र तोड़नेवाला नरकगामी होता है ॥ १ ॥

बिल्वपत्र के अभाव में—

शुष्कैःपर्युषितैः पत्रैरपि बिल्वस्य नारद ।
पूजयेद्गिरिजानाथमलाभे यत्नतो नरः ॥ (शिवरहस्ये)

शिवरहस्य में शिवजी ने नारद से कहा है कि हे नारद! नवीन बिल्वपत्र न हो तो मनुष्य यत्नपूर्वक सूखे और बासी बिल्वपत्र से ही शिवजी का पूजन करे।

वर्ज्यं पर्युषितं पुष्पं वर्ज्यं पर्युषितं जलम् ।
अवर्ज्यं जाह्नवीतोयं तुलसीपत्र बिल्वकम् ॥

(काशीखण्डे)

वासी फूल और बासी जल वर्जित है, किन्तु गङ्गाजल, तुलसी के दल, कमल के फूल और बिल्वपत्र, ये वासी भी वर्जित नहीं हैं ।

तुलस्यां विल्वपत्रे तु लतुजेषु च सर्वशः ।
न पर्युषितदोषोस्ति मालाकारगृहे तथा ॥

(शिवरहस्ये)

तुलसीपत्र, विल्वपत्र, नागरपत्र और माली के घर रहे हुए पुष्पादिक में वासीपन का दोष नहीं है ।

पर्युषिता न तुलसी मासमात्रेण दुष्यति ।
चत्वारिंशद्दिनं विल्वं कमलं त्रिदिनं शुभम् ॥१॥

वासी तुलसीपत्र एक महीने तक दूषित नहीं होता, चालीस दिन तक विल्वपत्र और तीन दिन तक कमल शुभ कहा गया है ॥ १ ॥

जातीपत्रैः फलैश्चापि तथा कुंकुमकेसरैः ।
सुगंधपुष्पैर्यत्नेन सदा पूज्यो महेश्वरः ॥

(सिद्धान्तशेखरे)

जातीपत्र, जातिफल, कस्तूरी, केसर और सुगन्धित फूलों से सदा यत्न करके शिवलिङ्ग का पूजन करे ।

नैषां पर्युषितत्वं च स्थितं संवत्सरावधि ।

ऊपर गिनाये जातीपुष्पादिकों में एक वर्ष बीतने तक बासीपन का दोष नहीं होता।

अर्पितान्यपि बिल्वानि प्रक्षाल्य च पुनः पुनः।
शंकरायार्पणीयानि न नवानि यदि क्वचित्॥

(स्कान्दे)

(बिल्वपत्र ताजा न मिले तो) चढ़ाये हुये बिल्वपत्र को फि[र] जल से धोकर शिवलिङ्ग पर चढ़ावे।

चूर्णीकृतान्यपि प्राज्ञैः बिल्वपत्राणि वैदिकैः।
संपाद्य पूजयेदीशं पत्राभावे विचक्षणः॥

(पाद्मे)

नवीन बिल्वपत्र नहीं मिले तो बुद्धिमानों को चाहिए कि बिल्वपत्र का चूरा ही इकट्ठा करके शिवजी पर चढ़ावे।

पुष्पमूर्ध्वमुखं योज्यं पत्रं योज्यं त्वधोमुखम्।
फलं तु सम्मुखं योज्यं यथोत्पन्नं तथार्पयेत्॥ (स्कान्दे)

फूल को ऊपर मुख करके, पत्र को नीचे मुख करके और फल को जैसा उत्पन्न हुआ हो, वैसे ही भगवान् को समर्पित करे।

विल्वपत्रैर्महादेवं स्वाहृतैरेव कोमलैः ।
यः पूजयति यत्नेन पदं प्राप्नोति शाङ्करम् ॥

(शिवरहस्ये)

जो पुरुष अपने लाये हुए कोमल बिल्वपत्रों से यत्नपूर्वक शिवजी का पूजन करता है, वह शिवपद को प्राप्त होता है ।

अरक्तैरिति रक्तपुष्पनिषेधो रक्तोत्पलकर्णिकारव्यतिरिक्तविषयकरक्तोत्पलैरिति ।

'पुष्प लाल रङ्ग के न हों ।' यह लाल फूल का निषेध लाल कमल और लाल कनेर के सिवाय और फूलों के विषय में कहा है ।

रक्तोत्पलैः कर्णिकारैर्यः करोति ममार्चनम् ।
स भाग्यवान् मनुष्येषु मम स्यात्प्रियकृत्तमः ॥

(गरुड़पुराण)

जो पुरुष लाल कमल और लाल कनेर से मेरा पूजन करता है, वह मनुष्यों में भाग्यवान् और मेरा बहुत ही प्यारा होता है ।

देवार्थं दत्तं पुष्पमस्तेयं मनुरब्रवीत् ।
याचितैः पत्रपुष्पाद्यैर्यः करोति सुरार्चनम् ॥
वृथा भवति सा पूजा ह्यपराधी भवेत्ततः ।

(कूर्मे)

देवता के निमित्त पत्र पुष्प की चोरी नहीं करे, मनुजी ने कहा है कि माँगे हुए पत्र पुष्पों से जो पुरुष देवपूजा करता है, वह पूजा निष्फल होती है। फल तो पाता नहीं, बल्कि अपराधी होता है।

देवोपरि धृतं यच्च वामहस्तधृतं च यत्।
अधोवस्त्रे धृतं यच्च जलांतःक्षालितं च यत्॥
देवतास्तम्भबद्धं च पुष्पं निर्माल्यतां व्रजेत्।

दक्ष प्रजापति ने कहा है कि देवता के ऊपर चढ़ाया हुआ, बायें हाथ में धारण किया हुआ, धोती में लिया हुआ, धोया हुआ और देवता के स्तंभ से बाँधा हुआ फूल निर्माल्य होजाता है। इससे वह पूजा के काम का नहीं रहता।

संभृतैरन्यकुसुमैः पूजनीयो महेश्वरः।
वृंतहनैः पूजनीयो वृहतीकुसुमैः शिवः॥

(स्कान्दे)

वृहती के सिवाय और फूल नाल सहित लेकर और नाल बिना वृहती के पुष्पों से पूजन करना चाहिए।

शैवागमेषु सर्वत्र प्रशस्तं करवीकरम्।
तस्य मध्ये स्थितो देवो लिङ्गाकारः सपीठकः॥

अर्पितं तन्न निर्माल्यं पुनः प्रोक्ष्य शिवं यजेत् ।
करवीरसहस्रेभ्यः शमीपुष्पं विशिष्यते ॥
शमीपुष्पसहस्रेभ्यो ह्येकं धत्तूरकं वरम् ।
धत्तूरकसहस्रेभ्यो बृहत्पुष्पं विशिष्यते ॥

(सिद्धान्तशेखरे)

शैवागम शास्त्रों में सब जगह कनेर के फूल की स्तुति की गयी है, क्योंकि उसके बीच में आधार के सहित लिङ्ग-स्वरूप देव स्थित हैं। चढ़ा हुआ कनेर का फूल निर्माल्य नहीं होता, धोकर फिर शिवजी को चढ़ाया जा सकता है। सहस्र कनेर के फूलों के समान एक शमी का पुष्प होता है ॥ २ ॥ हजार शमी-पुष्पों के बराबर एक धतूरे का पुष्प और हजार धतूरे के पुष्प के समान एक बृहती का पुष्प होता है।

बृहत्पुष्पसहस्रेभ्योऽप्यपामार्गो विशिष्यते ।

हजार बृहत्पुष्प के समान अपामार्ग (कुँगा चिड़चिड़ा) का फूल प्रशस्त कहा है। जहाँ कहीं अपामार्ग का पुष्प लेना लिखा हो, वहाँ पत्र ग्रहण करना चाहिए।

अपामार्गसहस्रेभ्यः श्री नीलोत्पलं वरम् ॥

हजार अपामार्ग के पत्रों से एक कमल श्रेष्ठ है।

बृहतीकुसुमैर्भक्त्या यो लिङ्गं सकृदर्चयेत् ॥
गवामयुतदानस्य फलं प्राप्य शिवं व्रजेत् ॥

जो पुरुष भक्तिपूर्वक एक बार भी बृहती (कटैया) के फूलों से शिवलिङ्ग का पूजन करता है, वह दस सहस्र गोदान करने का फल पाकर शिवरूप हो जाता है।

वर्जित फूल—

केशकीटापविद्धानि शीर्णपर्युषितानि च ॥
उग्रगंधानि पुष्पाणि शूद्रानीतानि वर्जयेत् ॥
एरंडपत्रैश्च तथा वासोभिः कुत्सितात्मभिः

(सौरपुराणे)

अब वर्जित फूल कहते हैं—बाल और कीड़े से बींधे हुए, कुम्हलाये हुए, वासी, जो वृक्षों से गिरे और सड़े हुए हों, उनको त्याग देना चाहिए। क्रूर गंधवाले अर्थात् जिनकी सुगन्धि से चित्त खराब हो उसे और शूद्र के लाये हुये, एरंड के पत्ते और मैले कपड़े में बँधे हुए, नीच आचरणवाले पुरुष द्वारा लाये हुए पुष्प शिवजी को अर्पण न करे।

एकं वापि तु धत्तूरं कार्तिके सोमवासरे।
यदि दद्यान्मम प्रीत्या मयि लीनो भविष्यति ॥

(शिवरहस्ये)

जो पुरुष कार्तिक के महीने में सोमवार को मेरी प्रीति के लिए धतूरे का एक फूल भी मुझे देता है (याने मेरे पर चढ़ाता है) वह मेरे में अर्थात् शिवरूप में लय होजाता है।

पुष्प चढ़ाने का प्रकार—

मध्यमानामिकामध्ये पुष्पं संगृह्य पूजयेत् ।
अंगुष्ठतर्जन्यग्राभ्यां निर्माल्यमपनोदयेत् ॥

(प्रयोगपारिजाते)

मध्यमा और अनामिका, इन दोनों अँगुलियों के बीच में फूल ग्रहण करके शिवजी को अर्पण करे और अँगूठा तथा तर्जनी के अग्रभाग से चढ़े हुए पुष्पों को हटावे।

तुलसीदलमात्रेण यः करोति शिवार्चनम् ।
कुलैकविंशमुद्धृत्य शिवलोके महीयते ॥

(नारदीयपुराणे)

जो पुरुष तुलसी के एक पत्र से शिवजीका पूजन करते हैं, वे अपनी इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार करके शिवलोक में रहते हैं।

धूप—

चन्दनागरुकर्पूरकुष्ठगुग्गुलचूर्णकैः ।
घृतेन मधुना चैव सिद्धो धूपः प्रशस्यते ॥१॥

(वायवीयसंहितायाम्)

गुग्गुलं घृतसंयुक्तं साक्षाद्गृह्णाति शंकरः ।
गोमूत्राद्गुग्गलुर्जातः सुगन्धिः प्रियदर्शने ॥ २ ॥
स धूपः सर्वदेवानां शिवस्य च विशेषतः ॥ ३ ॥

कृष्णागुरुं सकर्पूरं धूपं दद्याच्छिवाय वै ।
नैरं तर्पणमासाद्धं तस्य पुण्यमनंतकम् ॥ ४ ॥

(लैङ्गे)

चंदन (१) अगर (२) कपूर (३) कूठ (४) गूगुल (५) के चूर्ण में घी और शहद मिलाकर बनाया हुआ धूप श्रेष्ठ होता है ॥ १ ॥ सौरपुराण में कहा है कि घी मिले हुए गूगुल को साक्षात् शिवजी ग्रहण करते हैं । सुगंधित और देखने में प्यारा गूगुल गोमूत्र से उत्पन्न हुआ है ॥ २ ॥ धूप सब देवताओं और शिवजी को विशेष प्यारा है । लिङ्गपुराण में कहा है कि जो पुरुष पन्द्रह दिन तक नित्य कपूर मिले हुए काले अगर का धूप शिवजी को देता और जल से तर्पण करता है, उसको अनन्त पुण्य होता है ॥ ४ ॥

दीप—

कपिलासंभवे नैव घृतेनातिसुगन्धिना ।
नित्यं प्रदीपितो दीपः शस्तः शंकरपूजने ॥ १ ॥

शस्त इत्यनेन कपिलाघृतासंभवे कपिलाव्यतिरिक्तानां गवां घृतेनापि दीपोदेय इति बोधितम् ॥

(वायवीयसँहिता

कपिला गौ के न मिलने पर किसी भी गौ के अति सुगंधित घी से प्रज्वलित किये हुए दीपक शिव-पूजन में श्रेष्ठ हैं ॥१॥ 'कपिलासंभवे' इस विशेषण से कपिला गौ के घी के न होने पर कपिला से इतर गौवों के घृत से ही दीपक प्रकाश करे। ऐसा जानना चाहिये।

कुसुंभस्य च तैलेन दीपा दत्ताः शिवालये।
ज्ञानिनस्ते भविष्यन्ति दीपदानफलेन हि ॥

(स्कान्दे)

कुसुम्भ के तेल से जो मनुष्य मन्दिर में दीपदान करते हैं, वे दीपदान के फल से ज्ञानी होते हैं।

ये दीपमालां कुर्वन्ति कार्तिक्यां श्रद्धयान्विताः।
यावत्कालं प्रज्वलन्ति दीपास्ते लिंगमग्रतः ॥
तावद्युगसहस्राणि दाता स्वर्गे महीयते ॥

जो पुरुष कार्तिक की अमावस्या को परम श्रद्धा से शिवजी के आगे दीपों की पंक्ति बनाकर प्रकाश करते हैं, वे प्रकाश करते हुए दीपक जितने काल तक प्रकाशित रहते हैं। वह दीपक दान करनेवाला प्राणी उतने सहस्र युग तक स्वर्ग में निवास करता है।

छत्र—

छत्रं दत्त्वा महेशाय नन्दीश्वरसमो भवेत् ।
ततः क्रमात् क्षितिं प्राप्य सार्वभौमो नृपो भवेत् ॥१॥

शिवजी के लिए छत्र अर्पण करनेवाला प्राणी नन्दीश्वर के समान शिवजी का प्रिय गण होता है। इसके बाद क्रमशः फिर मृत्युलोक में आकर चक्रवर्ती राजा होता है ॥ १ ॥

चामरं—

दत्त्वा वै चामरं देवं वीज्यते यः शिवः पुरे ।
युगकोटिशतं भुक्त्वा चान्ते राज्यमवाप्नुयात् ॥१॥

जो प्राणी शिवजी के लिए चमर अर्पण करके हाँकता है वह एक अरब युग तक सुख भोगकर अन्त में राजा होता है ॥१॥

सङ्गीत—

सङ्गीतनृत्यं यः कुर्य्यात् स च सर्वफलं लभेत् ॥१॥

जो मनुष्य शिवजी के समक्ष नृत्य, गीत आदि करता है वह सब प्रकार के फल पाता है।

वस्त्र—

वासांसि सुविचित्राणि सारवन्ति मृदूनि च ।
धूपितानि शिवं दद्याद्विकेशानि नवानि च ॥१॥

यावत्तद्वस्त्रतन्तूनां प्रतिसंख्यासमन्वितम् ।
तावद्वर्षसहस्राणि शिवलोके महीयते ॥ २ ॥

जो मनुष्य मजबूत, मुलायम, नवीन और चित्र-विचित्र प्रकार के वस्त्रों को धूप आदि के द्वारा सुवासित करके शिवजी को अर्पण करता है, तो उस वस्त्र में जितने तन्तु रहते हैं, उतने हज़ार वर्षों तक वह प्राणी शिवलोक में पूजा जाता है ॥१॥२॥

ऋतुफल—

यः पक्वं श्रीफलं नित्य शिवाय विनिवेदयेत् ॥
गुरोर्वा होमयेद्वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ १ ॥

श्रीमद्भिः समहायानैर्भोगान् भुंक्ते शिवे पुरे ।
वर्षाणामयुतं साग्रन्त्वन्ते श्रीपतिर्भवेत् ॥२॥

जो मनुष्य नित्य पके हुए बेल के फल शिवजी को अर्पण करता है अथवा गुरु के द्वारा उसका हवन कराता है, उसका फल सुनो—वह प्राणी श्रीमान् पुरुषों के साथ शिवपुर में जाता और दस हज़ार वर्षों तक वहाँ के सुख भोगकर अन्त में धनवान् होता है ॥१॥

एकमाम्रफलं पक्वं यः शम्भोर्विनिवेदयेत् ।
वर्षाणामयुतं भोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥३॥

जो प्राणी एक भी आम का फल शिवजी के अर्पण करता है तो वह दस हज़ार वर्षों तक शिवलोक में विहार करता है ॥३॥

यो दाडिमफलं चैकं दद्यात् विकसितं नवम् ।
शिवाय गुरवे वापि तस्य पुण्यफलं शृणु ॥४॥
यावत्तद्बीजसंख्यानं शोभनं परिकीर्त्तितम् ।
तावदष्टयुतन्युच्च शिवलोके महीयते ॥५॥

जो मनुष्य विकसित, नवीन और पके हुए केवल एक अनार के फल को शिवजी को या गुरु को अर्पण करता है, उसका फल सुनो—जितने बीज उस अनार में रहते हैं, उनके अठगुने हज़ार वर्षों तक वह प्राणी शिवलोक में पूजा जाता है ॥३॥

द्राक्षाफलानि पक्वानि यः शिवाय निवेदयेत् ।
भक्त्या वा शिवयोगिभ्यस्तत्पुण्यफलं शृणु ॥६॥
यावत्तत्फलसंख्यानमुभयोर्विनिवेदितम् ।
तावद्युगसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥७॥

जो मनुष्य पके हुए अंगूर के फल शिवजी को अथवा शिव-भक्तों को प्रदान करता है, वह उन फलों की संख्या के हज़ार वर्षों तक शिवलोक में पूजा जाता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

यो नारंगफल पक्वं शिवाय विनिवेदयेत् ।
अष्टलक्षं महाभोगैः क्रीडते स शिवे पुरे ॥८॥

निवेद्य भक्त्या शर्वाय प्रत्येकं च फले फले ।
दशवर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥९॥

जो प्राणी पकी हुई नारंगी के फल शिवजी को अर्पण करता है, वह विविध प्रकार के भोगों को भोगता हुआ आठ लाख वर्षों तक शिवलोक में आनन्द करता है। इसी तरह कोई भी फल शिवजी को अर्पण करनेवाला प्राणी दस हजार वर्षों तक रुद्रलोक में सुख भोगता है ॥ ८ ॥ ९ ॥

प्रदक्षिणा और नमस्कार—

पूजयित्वा महादेवं लिङ्गरूपिणमव्ययम् ।
प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा प्रणमेद्दशपंच च ॥

(ब्रह्मवैवर्ते)

ब्रह्मवैवर्त में लिखा है कि लिङ्ग-रूप अविनाशी महादेव की पूजा करके तीन परिक्रमा करे और दस या पाँच बार नमस्कार करे।

लिङ्गं समर्चितं दृष्ट्वा यः कुर्यात्प्रणतिं सकृत् ॥
संदेहो जायते तस्य पुनर्देहनिबंधने ॥ (काशीखण्डे)

काशीखण्ड में कहा है कि पूजन के अनन्तर शिवलिङ्ग का दर्शन करके जो मनुष्य नमस्कार करता है, फिर उसके जन्म होने में सन्देह है, अर्थात् वह मोक्ष को प्राप्त होता है।

यद्दर्द्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः ।
न तच्चित्रं तस्मिन्वरिवसितरि त्वच्चरणयो-
र्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३॥

(शिवमहिम्न)

इसी तरह महिम्न में भी कहा है—हे वरदानोन्मुख! जिसने त्रैलोक्य मात्र को अपने दासों के समान बना दिया था, ऐसे बाणासुर ने देवराज इन्द्र की भी वड़ी भारी समृद्धि को नीचे कर दिया। सो आपके चरणों को प्रणाम करनेवाले बाणासुर के विषय में कुछ आश्चर्यजनक बात नहीं है। क्योंकि आपको सिर झुकाना किसके अभ्युदय के लिए नहीं होता, अर्थात् सभी प्रणाम करने वाले का महोदय होता है ॥१३॥

उत्थायोत्थाय अष्टाङ्गान्प्रणामान्विंशदुत्तरान् ।
यः करिष्यति यत्नेन स पापेभ्यो विमुच्यते ॥

(स्कान्दे)

स्कन्दपुराण में कहा है कि जो पुरुष बारम्बार शिवजी को उत्साह (श्रद्धा) पूर्वक बीस से एक अधिक (इक्कीसबार) अष्टांग प्रणाम करता है, वह पापों से छूट जाता है।

पशोः पशुपतेरग्रे दण्डवत्पतितस्य हि ।
पतिता पातकाः सर्वे नोत्तिष्ठंति कदाचन ॥

(काशीखण्डे)

पशुपति के आगे दण्ड की तरह गिरनेवाले मनुष्य के सब पाप नष्ट हो जाते हैं। वे फिर कभी भी नहीं उठते।

शिवार्चनं सदा कार्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृभिः ।
प्राक्पश्चिमोदकास्यैस्तु प्रातःसायं निशासु च ॥

बृहस्पति ने कालभेद से दिशा का भेद कहा है। मनुष्य को भोग मोक्ष का देनेवाला शिव-पूजन प्रातः काल पूर्वाभिमुख, सायंकाल को पश्चिमाभिमुख और रात्रि के समय उत्तराभिमुख होकर करना चाहिए।

प्रदक्षिणानमस्कारौ सर्वाभीष्टप्रदाशुभौ ।
पूजांते च सदा कार्यौ भोगमोक्षार्थिभिर्नरैः ॥१॥

सनत्कुमारसंहिता में कहा है कि परिक्रमा और नमस्कार, ये दोनों सब मनोर्थ पूरे करते हैं। इस लिए मनुष्यों को पूजा के अन्त में भोग तथा मोक्षकी प्राप्तिके लिए सदा प्रदक्षिणा करनी चाहिए॥१।

शिवं प्रदक्षिणीकृत्य सव्यासव्यविधानतः ।
यत्फलं समवाप्नोति तन्मे निगदतः शृणु ॥१॥

राजन्प्रदक्षिणैकेन मुच्यते ब्रह्महत्यया ।
द्वितीयेनाधिकारित्वं तृतीयेनेन्द्रसंपदम् ॥२॥

(सनत्कुमारसंहितायां)

बृहन्नारदीयपुराण में कहा है कि सव्य-अपसव्य की विधि से शिवजी की परिक्रमा करने से जो फल प्राप्त होता है, वह मैं कहता हूँ, श्रवण करो ॥ १ ॥ हे राजन् ! एक परिक्रमा करने से मनुष्य के ब्रह्महत्या की निवृत्ति होती है, दूसरी से मनुष्य अधिकारी पद पाता है और तीसरी से इन्द्र के भी ऐश्वर्य को पा लेता है ॥२॥

प्रदक्षिणं द्विजः कुर्यात्पंच ब्रह्माणि वै जपन् ।

(कूर्मपुराणे)

'सद्योजातादि' पाँच मंत्र जपता हुआ द्विज शिवजी की परिक्रमा करे ।

प्रातः शिवार्चने देवि दश कार्याः प्रदक्षिणाः ।
मध्याह्ने द्वादशाथैकादश सायाह्नि सादरम् ॥

(शिवरहस्ये)

हे देव ! प्रातःकाल शिव-पूजा में दस परिक्रमा करनी चाहिए । मध्याह्न में बारह और सायंकाल में प्रेमपूर्वक (श्रद्धा युक्त) ग्यारह परिक्रमा करे ।

अपसव्यं यतीनां तु सव्यं तु ब्रह्मचारिणः ।
सव्यासव्यं गृहस्थस्य शंभोः प्रोक्ता प्रदक्षिणा ॥१॥

(पाद्मे)

पद्मपुराण में कहा है कि यतियों को अपसव्य, ब्रह्मचारियों को सव्य और गृहस्थियों को सव्य-अपसव्य अर्थात् सीधी-उलटी दोनों तरह से शिवजी की परिक्रमा करनी चाहिए।

ज्योतिर्लिङ्गे रत्नलिङ्गे स्वयंभुवि तथैव च ।
वृषचंडादिनियमः सुरेश्वर न विद्यते ॥ १ ॥

(सूतसंहिता)

सूतसंहिता में कहा है कि हे सुरेश्वर ! ज्योतिर्लिङ्ग में, रत्नलिङ्ग में और विना किसी के स्थापन किये अर्थात् स्वयं प्रकट हुए लिङ्ग में वृषचंडादिका नियम नहीं है ॥१॥

शिवप्रदक्षिणायां तु मौनं कार्यं प्रयत्नतः ।
कृतांजलिपुटैरेव शिवस्मरणपूर्वकम् ॥

(नारदीये)

नारदपुराण में कहा है कि शिवजी की परिक्रमा करते समय मौनभाव से दोनों हाथ जोड़े शिवजी का स्मरण करते रहना चाहिए।

प्रसादमहिमा—

रुद्रभुक्तं भुंजीत रुद्रपीतं पिबेत रुद्राघ्रातं जिघ्रेत । रुद्रेणात्तमश्नंति रुद्रेण पीतं पिबंति रुद्राघ्रातं जिघ्रति तस्माद्
ब्राह्मणा प्रशांतमनसो निर्माल्यमेव भक्षयन्ति ।

(जाबाल उपनिषद्)

रुद्र का भोजन किया हुआ भोजन करे, पिया हुआ पीवे, रुद्र का सूँघा सूँघै । ज्ञानी लोग रुद्र का उच्छिष्ट भोजन करते हैं, रुद्र का पिया पीते हैं, रुद्र का सूँघा सूँघते हैं, इस वास्ते शान्त चित्तवाले *ब्राह्मण निर्माल्य का ही प्रसाद लेते हैं ।

अन्तरिच्छंति तं जनो रुद्रं परो मनीषया गृभ्णन्ति जिह्वया स समिति ।

अन्तर्नेच्छन्ति रुद्रं भवानीसहितं शिवम् ।
पुरीषमेव गृह्णन्ति जिह्वया ते न संशयः ।। २ ।।
असमर्प्योदनं शंभोर्भुङ्क्ते खादति याति चेत् ।
स्वमांसमस्थिमूत्रञ्च भुङ्क्ते खादति याति च ।।३।।

(ऋग्वेद)

सज्जन लोग अपनी जिह्वा से एकमात्र रुद्र भगवान् का

---

* 'ब्राह्मण' यह शब्द ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, इन तीनों का उपलक्षण करता है ।

भजन करते हैं और शिवनैवेद्य का ही भोजन करते हैं। इसके विपरीत जो लोग पार्वती समेत शिवजी का भजन नहीं करते और बिना शिवजी को अर्पण किये खाते हैं, वे अन्न न खाकर पुरीष का भक्षण करते हैं। जो मनुष्य शिवजी को अर्पण किये बिना अन्न खाता है, वह अन्न न खाकर अपना ही मांस हड्डी और मूत्र का भक्षण करता है।

त्रिशुप्सान्नमश्नीयाद्यदि पाप्मा शिवं नार्पितं भुङ्क्ष्व तदन्नं नो भुङ्क्ष्व मलं भुङ्क्ष्व कृमिं भुङ्क्ष्व अघं भुङ्क्ष्व अधो गच्छ ॥ (कठोपनिषद्)

यदि शिवजी को अर्पण न किया हुआ अन्न खाते हो तो अन्न न खाकर मल खाओ, कीड़े खाओ, पाप खाओ और अधोगामी बनो।

(१) शिवनिर्माल्य से इतर अर्थात् राग से प्राप्त हुआ भोजन पशुओं की तरह है।

(२) शिवनिर्माल्य प्रसाद की निन्दा के वचन सबों को अवश्य नष्ट करनेवाले होते हैं। उनके वचन अप्रामाणिक हैं, ऐसा कह सकते हैं।

श्रुतिस्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेव बलीयसी।

(जैमिनीयसूत्र)

श्रुति और स्मृति के विरोध में श्रुति ही बलवती होती है।

तब भी बहुत आग्रह करनेवाले मनुष्यों को जानने के वास्ते निर्माल्य भक्षण का निषेध करनेवाले बचनों की बहुत पुराणों में प्रतिबन्ध करके व्यवस्था लिखी है।

शिवनिर्माल्य के विषय में विचार।

ऋषय ऊचुः।

अग्राह्यं नैव नैवद्यमिति पूर्वं श्रुतं वचः।
ब्रूहि तन्निर्णयं बिल्वमाहात्म्यमपि सन्मुने ॥१॥

एक समय ऋषियों ने सूतजी से पूछा कि मैंने बहुतों के मुख से सुना है कि शिवनैवेद्य अग्राह्य नहीं है, सो आप इसका निर्णय और बिल्व के माहात्म्य के विषय में भी कहिए ॥१॥

सूत उवाच।

शिवभक्तः शुचिः शुद्धः सद्व्रती दृढनिश्चयः।
भक्षयेच्छिवनैवेद्यं त्यजेदग्राह्यभावनाम् ॥१॥

पवित्र, शुद्ध और दृढ़ निश्चयवाले शिव-भक्त को चाहिए कि "शिवनैवेद्य त्याज्य है" इस भावना को छोड़कर शिवजी के प्रसाद को ग्रहण करे ॥२॥

दृष्ट्वापि शिवनैवेद्यं यान्ति पापानि दूरतः ।
भुक्ते तु शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ॥ ३ ॥

शिवनैवेद्य को देखते ही सारे पाप दूर भाग जाते और शिवनैवेद्य को खाने से करोड़ों प्रकार के पुण्य अपने पास दौड़ आते हैं ॥ ३ ॥

(ब्रह्माण्डपुराणे)

अलं यागसहस्रेणाप्यलं यागार्बुदैरपि ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ४ ॥

हज़ारों क्या अरबों यज्ञ करने से कोई लाभ नहीं । एक मात्र शिवनैवेद्य का भक्षण करने से भक्त शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥

यद्गृहे शिवनैवेद्यप्रचारोऽपि प्रजायते ।
तद्गृहं पावनं सर्वमन्यपावनकारणम् ॥ ५ ॥

जिसके घर शिवार्पित नैवेद्य पहुँच जाता है, वह घर परम पवित्र है । बल्कि उसके द्वारा और लोग भी पवित्र हो जाते हैं ॥ ५ ॥

आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा ।
भक्षणीयं प्रयत्नेन शिवस्मरणपूर्वकम् ॥ ६ ॥

यदि शिवनैवेद्य मिल जाय तो उसे लेकर माथे चढ़ाये और शिवजी का स्मरण करता हुआ यत्न से खाय ॥ ६ ॥

आगतं शिवनैवेद्यमन्यदग्राह्यमित्यपि ।
विलंबे पापसम्बन्धो भवत्येव हि मानवे ॥ ७ ॥

मिलते हुए शिवनैवेद्य को अग्राह्य मानकर भक्षण करने में देर करनेवाले को पाप का भागी बनना पड़ता है ॥ ७ ॥

न यस्य शिवनैवेद्यग्रहणेच्छा प्रजायते ।
स पापिष्ठो गरिष्ठः स्यान्नरकं यात्यपि ध्रुवम् ॥ ८ ॥

जिसे शिवनैवेद्य ग्रहण करने की इच्छा नहीं होती, वह बड़ा पापी होता और उसे नरक में जाना पड़ता है ॥ ८ ॥

हृदये चन्द्रकान्ते च स्वर्णरूप्यादिनिर्मिते ।
शिवदीक्षावता भक्तेनेदं भक्ष्यमितीर्यते ॥ ९ ॥

हृदय में चन्द्रकान्त मणि, सुवर्ण अथवा चाँदी के बने यंत्र (अभूषण) को धारण करनेवाले शिव-भक्तको चाहिए कि वह शिव-नैवेद्य को अवश्य खाय । ऐसा बहुत स्थानों पर कहा गया है ॥९॥

शिवदीक्षान्वितो भक्तो महाप्रसादसंज्ञकम् ।
सर्वेषामपि लिंगानां नैवेद्यं भक्षयेच्छुभम् ॥ १० ॥

शिवदीक्षा ग्रहण किये हुए भक्त को चाहिए कि सब प्रकार के लिङ्गों के महाप्रसाद का भक्षण करे । क्योंकि वह बड़ा पवित्र वस्तु है ॥ १० ॥

अन्य दीक्षायुजां नृणां शिवभक्तिरतात्मनाम् ।
शृणुध्वं निर्णयं प्रीत्या शिवनैवेद्यभक्षणे ॥११॥

शिवदीक्षा के अतिरिक्त और प्रकार की दीक्षा से दीक्षित, किन्तु शिवभक्ति में मन लगानेवाले भक्तों के लिए नैवेद्यभक्षण सम्बन्धी निर्णय भी सुन लो ॥११॥

शालग्रामोद्भवे लिङ्गे रसलिङ्गे तथा द्विजाः ।
पाषाणे राजते स्वर्णे सुरसिद्धप्रतिष्ठिते ॥१२॥

शालग्रामी से जिस लिङ्ग की उत्पत्ति हुई हो, पारे से जो मूर्ति बनायी गयी हो, जो पाषाण निर्मित हो या सोने-चाँदी से बनी हो अथवा किसी देवता तथा सिद्ध के हाथों जिस प्रतिमा को प्रतिष्ठा हुई हो ॥ १२ ॥

काश्मीरे स्फाटिके रात्ने ज्योतिर्लिङ्गेषु सर्वशः ।
चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शंभोर्नैवेद्यभक्षणम् ॥१३॥

काश्मीर में जिस लिङ्ग की उत्पत्ति हुई हो, स्फटिकमणि तथा रत्न से जिस मूर्ति का निर्माण हुआ हो और जिन लिङ्गों की द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में गणना है, उन शिवलिङ्गों के नैवेद्य भक्षण करने का फल चान्द्रायणव्रत के समान कहा गया है ॥१३॥

ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत् ।
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति ॥१४॥

चाहे कोई मनुष्य ब्रह्महत्यारा ही क्यों न हो, यदि वह पवित्र होकर शिवनिर्माल्य को धारण करता और नैवेद्य का भक्षण करता है तो तुरन्त उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१४॥

चण्डाधिकारो यत्रास्ति तद्भोक्तव्यं न मानवैः ।
चण्डाधिकारो नो यत्र भोक्तव्यं तच्च भक्तितः ॥१५॥

जहाँ कि चण्डाधिकार माना गया है, वहाँ का नैवेद्य न खाना चाहिए, किन्तु जहाँ चण्डाधिकार नहीं है, वहाँ का नैवेद्य भक्ति पूर्वक खाना चाहिए ॥ १५ ॥

वाणलिङ्गे च लौहे च सिद्धलिङ्गे स्वयंभुवि ।
प्रतिमासु च सर्वासु न चण्डोधिकृतो भवेत् ॥१६॥

(शिवपुराणे)

* वाणलिङ्ग, लौहलिङ्ग, सिद्धलिङ्ग, स्वयं उत्पन्न लिङ्ग तथा सब प्रकार की प्रतिमाओं में चण्डाधिकार नहीं माना जाता ॥१६॥

---

* नर्मदाजलमध्यस्थं वाणलिंगमितिस्थितं वाणासुरार्चितं लिंग वाणं लिंगं तदुच्यते ॥१॥

नवेद्यं पुरतो न्यस्तं दर्शने स्वीकृतं मया ।
रसान्भक्तस्य जिह्वाग्रादश्नामि कमलोद्भव ॥१॥

(स्कान्दे)

शिवजी कहते हैं—हे ब्रह्मन् ! सामने लाये हुए नैवेद्य को दर्शन करके ही मैं स्वीकार कर लेता हूँ और उसके रसों को भक्तों की जिह्वा से खाता हूँ ॥१॥

निर्माल्यं देवदेवस्य चान्द्रायणशताद्वरम् ।
श्रद्धया परया तस्माद्भोक्तव्यं तद्द्विजातिभिः ॥१॥
लोभान्न धारयेच्छंभोर्निर्माल्यं न च भर्त्सयेत् ।
न स्पृशेदपि पादेन लंघयेन्नापि नारद ॥२॥

(आदित्यपुराणे)

आदित्यपुराण में श्रीकृष्णजी नारद से कहते हैं कि देव-देव शिवका निर्माल्य सैकड़ों चान्द्रायण से भी श्रेष्ठ है । इस लिए द्विजाति मात्र को चाहिए कि परम श्रद्धा के साथ उसे खायँ ॥१॥ लोभवश शिवनिर्माल्य रक्खे नहीं, बल्कि खाजायँ । उसे पैर से न छुवे और लाँघे भी नहीं ॥२॥

निर्माल्यं निर्मलं शुद्धं निर्मलत्वादनिन्दितम् ।
तस्माद्भोज्यं निर्माल्यं प्राकृतैरशिवात्मकैः ॥१॥

अशुद्धात्मा शुचिर्लोभादद्भुतम्पावनं परम् ।
भक्षयेन्नाशमायाति शूद्रो ह्यध्ययनादिवत् ॥२॥

(शिवपुराणे)

शिवनिर्माल्य शुद्ध और मल रहित वस्तु है और निर्मल होने के कारण वह प्रशंसनीय है। इस लिए वह नीच और अपवित्र विचारवाले मनुष्यों के खाने योग्य वस्तु नहीं है ॥ १ ॥ जो अपवित्र मनवाला अपवित्र मनुष्य लोभ वश परम पवित्र शिवनिर्माल्य का भक्षण कर लेता है तो वह नष्ट हो जाता है। जैसे शूद्र अध्ययन, तप आदि करने से नष्ट होते हैं ॥२॥

मदीयभुक्तं निर्माल्यं पादाम्बु कुसुमं जलम् ।
धर्ममर्थञ्च कामं च मोक्षं च ददते क्रमात् ॥१॥
मल्लिङ्गधारिणो लोके दशोक्ता मत्परायणाः ।
मदेकशरणास्तेषां योग्यं नैवान्यजन्तुषु ॥२॥
पत्रं पुष्पं फलं तोयमन्नपानाद्यमौषधम् ।
अनिवेद्य न भुञ्जीत यदाहाराय कल्पितम् ॥३॥

(स्कान्दे)

मेरा खाया हुआ निर्माल्य, चरणोदक, पुष्प और जल क्रमशः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इन चारों पदार्थों को देता है ॥ १ ॥ जो प्राणी त्रिपुण्ड्र आदि को धारण करते, मेरे चिन्ह मेरे

परायण रहते और एक मात्र मेरी शरण आते हैं, उन्हें किसी और योनि में नहीं जाना पड़ता ॥ २ ॥ पत्र, पुष्प, फल, जल, अन्न, पान तथा औषधि आदि कोई भी खाने योग्य वस्तु बिना शिवजी के अर्पण किये न खाय ॥३॥

गंगोदकात्पवित्रन्तु शिवपादोदकादिकम् ।
पीतं वा मस्तकस्थं वा नृणां पापहरं परम् ॥१॥
दृष्टिपूतं पिबेत्सर्वं शिवस्य परमात्मनः ।
तद्धै पापहरं पुत्र किं पुनः पादयोर्जलम् ॥२॥
उपवाससहस्राणि प्राजापत्या युतानि चँ ।
शिवप्रसादसिक्थस्य कोट्यंशेनापि नो समम् ॥३॥
अलं यागसहस्रेणाप्यलं योगार्बुदैरपि ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥४॥
दृष्टेऽपि शिवनैवेद्ये यान्ति पापानि दूरतः ।
भक्षिते शिवनैवेद्ये पुण्यान्यायान्ति कोटिशः ॥५॥

(ब्रह्माण्डपुराणे)

गङ्गाजल से भी पुनीत शिवजी का पादोदक होता है। उसे पीने अथवा माथे पर चढ़ाने से मनुष्यों के सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ यदि शिवजी को दिखाकर याने अर्पण

कर के जल आदि सब चीजें पीवे तो सब पाप दूर हो जाते हैं। फिर शिव-पादोदक न भी पिये तो कोई हानि नहीं ॥ २ ॥ हजार उपवास व्रत और दस हजार प्राजापत्य यज्ञ शिवनैवेद्य के एक तन्दुल पका हुआ एक दाना के करोड़वें हिस्से के बराबर भी नहीं हो सकते ॥ ३ ॥ हजार यज्ञ और अरब यज्ञ से भी जो नहीं हो सकता, एक मात्र शिवनिर्माल्य का भक्षण करने से प्राणी शिवसायुज्य मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ शिवनैवेद्य को देखने मात्र से पाप दूर भाग जाते हैं और उसका भक्षण करने से करोड़ों पुण्य अपने पास दौड़ आते हैं ॥५॥

पुष्पं फलं सुगंधं च वस्त्राण्याभरणानि च ।
शिवार्पितानि स्वीकुर्यादन्यथा किल्विषी भवेत् ॥

(लैङ्गे)

लिङ्गपुराण में लिखा है कि पुष्प, फल, सुगंधित, द्रव्य (वगैरह) वस्त्र, आभूषणादि सब पदार्थ शिवजी के चढ़ाये हुए ही ग्रहण करे। ऐसा नहीं करने से पाप होता है।

मद्यमन्नं प्रयत्नेन निवेद्याश्नाति यः सदा ।
स भूपालः सर्ववेत्ता भवत्येव हि सर्वथा ॥

(ब्रह्मांडे)

निर्मलत्वाच्च निर्माल्यं नृणां नैर्मल्यकारणम् ।
यद्यदात्महितं लोके तत्तद्द्रव्यं परं च यत् ॥ २ ॥
शिवलिङ्गार्पितं कुर्यात्तत्र तुष्यति शंकरः ॥ ३ ॥

ब्रह्मांडपुराण में कहा है कि जो मनुष्य मेरे अर्थात् शिवलिङ्ग को यत्न से अर्पण करके भोजन करता है तो वह सर्वथा सर्वज्ञ और पृथ्वी का पालन करनेवाला राजा होता है ॥१॥ निर्मल होने से ही शिवार्पित द्रव्य निर्मोल्य कहलाता है । वह मनुष्यों के मल दूर कर देता है, लोक में जो पदार्थ अपने को प्रिय और श्रेष्ठ हो सो पदार्थ शिवजी को अर्पण करे । इसी से शिवजी प्रसन्न होते हैं ॥ ३ ॥

यद्वर्तीदुर्लोके पचति विविधं त्वौषधिगणम्
तथैवान्नं वह्नी रविरपि पुनातीह सकलम् ।
विधिर्यद्रेतोजो जनयति जगत्स्थावरचरम्
सुवर्णं यद्रेतः सुरनरगणा बिभ्रति तनौ ॥ १ ॥

जिस (शिवजी) का नेत्ररूप चन्द्रमा लोक में अनेक प्रकार की औषधियों के समूहको पकाता है, दूसरा नेत्र अग्नि रूपसे अन्न पचाता है, तीसरा नेत्र सूर्य्य सब को पवित्र करता है जिसके वीर्य से उत्पन्न ब्रह्मा स्थावर, जंगम जगत को

उत्पन्न करते हैं और जिसके वीर्य से उत्पन्न हुए सोरे को सब देवता और मनुष्य शरीर में धारण करते हैं—

श्रुतिर्यड्डुक्काजा मनसि दधते वाचि च बुधाः
यदङ्घ्र्युत्थं चक्रं हरिरवति बिभ्रत्त्रिभुवनम् ।
तथा धत्ते नेत्रं हरयजनसंपूतमनिशम्
क ईष्टे भोक्तुं तत्परमशिवसंपर्करहितम् ॥

जिसके डमरू बजाने से उत्पन्न हुये वेदों को पण्डित लोग अपनी वाणी और मन में धारण करते हैं, जिसके चरण से उत्पन्न हुए चक्रको धारण किये विष्णु तीनों लोकों की रक्षा करते हैं और उन्हीं शिवजी के पूजन करने से पवित्र हुए नेत्र को निरंतर विष्णु ने धारण किया है, ऐसे परम शिवजी के संपर्क से रहित पदार्थ का उपभोग कौन कर सकता है ।

उपवाससहस्राणि प्राजापत्या युतानि च ॥ ३ ॥
शिवार्पितं बिना भुंक्ते सद्यो भवति कल्बिषी ॥ ४ ॥

हजार प्राजापत्य (बारह हजार मंत्र जपको प्राजापत्य कहते हैं) को दस हजार से गुणा किया तो बारह करोड़ हुआ, इनका करनेवाला भी शिवजी को अर्पण किये बिना भोजन करे तो तत्काल पाप का भागी होता है ॥ ४ ॥

शम्भोर्निर्माल्यकं शुद्धं भुञ्जीयात्सर्वतो द्विजः ।
अन्यदेवस्य नैवेद्यं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ १ ॥

(सूतसंहिता)

सूतसंहिता में कहा है कि द्विज संज्ञावालों को शिवजी का शुद्ध निर्माल्य भोजन करना चाहिये और किसी देव नैवेद्य भोजन करनेवाला चान्द्रायण व्रत करने से शुद्ध होता है ॥१॥

शालग्रामशिलालिङ्गे यः करोति ममार्चनम् ।
तेनार्चितः कार्तिकेय युगानामेकसप्ततिः ॥ २ ॥

भगवान् शिवजी कहते हैं—हे कार्तिकेय ! जो पुरुष शालग्राम रचित लिङ्ग में एक बार भी मेरा पूजन करे तो उसको एकहत्तर युगों के पूजन का फल प्राप्त होता है ॥ १ ॥

गङ्गानङ्गरिपोर्जटाविगलिता तन्म पुष्पं शशी
केशात्तस्य वियत्ततो विगलिता वृष्टिर्जगज्जीवनी ।
रुद्रोऽग्निः श्रुत एव सर्वमशनं तज्जिह्वया याचते ।
निर्माल्यं तु विहाय च क्षितितले जीवन्ति के पापिनः ॥

जिन शिवजी की जटा से गंगाजी उत्पन्न हुई हैं, चन्द्रमा जिनके मस्तक का फूल है, जिसकी केशराशिसे आकाश बना है और उस आकाश से जगत को जीवन प्रदान करनेवाली वृष्टि होती है,

जो रुद्र भगवान् अग्नि होकर सब प्रकार की वस्तुयें खाते हैं, ऐसे शिवजी के निर्माल्य को त्याग कर जीनेवाले कौन पापी होंगे अर्थात् कोई नहीं ।

शिवपादोदकमहिमा—

गङ्गा पुष्करनर्मदा च यमुना गोदावरी गोमती
गङ्गा द्वारवती प्रयागवदरी वाराणसीसिन्धुषु ।
रेवासेतुसरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभांडोदरे
तीर्थस्नानसहस्रकोटिफलदं श्रीशम्भुपादोदकम् ॥

(स्कान्दे)

गंगा, पुष्कर, नर्मदा, यमुना, गोदावरी, गोमती, गंगा, द्वारिका, प्रयाग, वदरीनारायण, वाराणसी (काशी), समस्त समुद्र, रेवा, सेतुबन्ध रामेश्वर, सरस्वती आदि ब्रह्माण्ड में जितने भी तीर्थ हैं, उनमें स्नान करने से जो फल होता है, उससे हजारों और करोड़ों गुना अधिक पुण्य शिवपादोदक के पीने से होता है ।

षोडशोपचारपूजनम् ।

आवाहनासने पाद्य मर्घ्यमाचमनीयकम् ।
स्नानं वस्त्रोपवीतं च गंधपुष्पं च धूपकम् ॥
दीपमन्नं नमस्कारः प्रदक्षिणविसर्जने ॥

"षोडश" यह आर्ष प्रयोग है. षोडश अर्थात् सोलह उपचार।

आवाहन (१) आसन (२) पाद्य (३) अर्घ्य (४) आचमन (५) स्नान (६) वस्त्र (७) जनेऊ (८) चंदन (९) पुष्प (१०) धूप (११) दीप (१२) नैवेद्य (१३) नमस्कार (१४) परिक्रमा (१५) विसर्जन (१६) ये ही सोलहों उपचार हैं।

ध्यानं च स्वासनं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम्।
स्नानं वस्त्रोपवीतं च भूषणानि तथैव च ॥ १ ॥
गंधं पुष्पं तथा धूपं दीपमन्ननिवेदनम्।
प्रदक्षिणनमस्कारौ ह्युपचारास्तु षोडश ॥ २ ॥
(सिद्धान्तशेखरे)

ध्यान (१) आसन (२) पाद्य (३) अर्घ्य (४) आचमन (५) स्नान (६) वस्त्र (७) यज्ञोपवीत (८) आभूषण (९) चन्दन (१०) पुष्प (११) धूप (१२) दीप (१३) नैवेद्य (१४) परिक्रमा (१५) नमस्कार (१६) ये भी सोलह उपचार माने गये हैं ॥ १ ॥ २ ॥

पंच प्रकार–

पूजाभेदेन यजनं पंचधा परिकीर्तितम्।
आराधनार्चनं पूजा यागोर्हा चेति पंचधा ॥३॥ (स्कांदे)

पूजा भेद से शिवलिङ्ग का पूजन करना पाँच प्रकार का कहा है आराधन (१) अर्चन (२) पूजा (३) याग (४) अर्ह (५) पूजन के ये पाँच भेद मुनीश्वरों ने कहा है ॥ ३ ॥

(१) * आराधन–दीपदर्शन पर्यन्त पूजन मुक्ति को देने-वाला आराधना है।

(२) अर्चन–नैवेद्य पर्यन्त पूजन का नाम अर्चन है।

(३) पूजा–ग्रामादिक में उत्सव पर्यन्त पूजन करने को सब सुखों का देनेवाली पूजा कहा जाता है।

(४) याग–नृत्य पर्यन्त किया हुआ पूजन राज्य और देश को ऋद्धि से पूर्ण करनेवाला याग पूजन कहा जाता है।

(५) अर्ह–ब्राह्मणों को भोजन कराने पर्यन्त पूजन का नाम अर्ह पूजा है, यह सब शान्ति को देनेवाली है।

अष्टोपचार—

गंधः पुष्पं धूपं च दीपमन्ननिवेदनम्।
ताम्बूलं च नमस्कारः प्रदक्षिणाष्टमापने ॥ (शैवागमे)

चंदन (१) पुष्प (२) धूप (३) दीप (४) नैवेद्य (५) ताम्बूल (६) नमस्कार (७) और परिक्रमा ये अष्टोपचार कहे गये हैं।

इति।

---

* आराधनं तु दीपांतं मुनीनां मुक्तिदायकम्।
अर्चनं स्यान्नविष्यांतं मुमुक्षोर्मुक्तिदायकं ॥
पूजोत्सवांता विज्ञेया ग्रामादौ सर्वसौख्यदा।
यागो नृत्यांतको ज्ञेयो राज्यराष्ट्रसमृद्धिकृत ॥ (स्कान्दे)

परिशिष्ट की विषयानुक्रमणिका।